ज्वार

वानस्पतिक नामः *सोरघम बाइकलर*

कुलः पोएसी

ज्वार एक महत्पूर्ण चारे की फसल है जिसे भारत में विभिन्न मृदाओं में उगाया जाता है। ज्वार का चारा स्वादिष्ट, पाचक और पौष्टिक होता है जिसे हरी अवस्था में खिला सकते है या हरे चारे से साइलेज बनाकर या फिर सूखी कड़वी के रूप में खिला सकते है। ज्वार खरीफ एवं जायद की प्रमुख चारा फसल है। खरीफ की फसल में प्राप्त कुल चारे का 80 से 85 प्रतिशत ज्वार से प्राप्त होता है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी ज्वार की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। भारत में ज्वार की खेती मुख्यतः महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में होती है।

पोषकता

पशुओं के लिए इसका चारा पर्याप्त रूप से पौष्टिक होता है। शुष्क भार के आधार पर इसमें 9–10 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 55–65 प्रतिशत एन.डी.एफ., 32 प्रतिशत सेलुलोज एवं 21–23 प्रतिशत हेमीसेलुलोज पाया जाता है। ज्वार दाने व चारे दोनों के लिए उगाई जाती है तथा कड़वी में 6–6.4 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 32–36 प्रतिशत क्रूड फाइबर होता है।

मृदा एवं उसकी तैयारी

ज्वार की खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। यद्यपि अच्छी जल निकास वाली बलुई दोमट मृदा जिसका पी.एच. 6.5 से 7.5 हो, अच्छी रहती है। खेत तैयार करने के लिए एक जुताई मिटटी पलट हल से फिर दो जुताई हैरो से करके पाटा लगा देना चाहिए जिससे की खेत खरपतवार रहित और ढेलामुक्त हो जाये।

बीज दरः बड़े दाने वाली प्रजातियों का 35–40 किलो/हे. तथा छोटे दाने वाली प्रजातियों (सूडान टाइप) का 25–30 किलो/हे. बीज पर्याप्त होता है। बहु कटाई वाली संकर प्रजातियों का 15–20 किलो/हे. बीज पर्याप्त होता है। बीज को एजोस्पिरिलम, एजोटोबैक्टर एवं पी.एस.बी (बेसिलस, स्यूडोमोनास) जैव उर्वरकों से उपचारित करके बोने से 15–20 प्रतिशत तक रासायनिक उर्वरकों की बचत होती है।

बुवाई का समय एवं विधि

खरीफ में एक व दो कटाई वाली प्रजातियाँ तथा जायद में सिंचाई के साथ बहु कटाई वाली प्रजातियाँ उगाईं जाती हैं। जायद में बुवाई मध्य मार्च से मध्य अप्रैल जबकि खरीफ में बुवाई का ईष्टतम समय 25 जून से 10 जुलाई है। दक्षिणी भारत में जहाँ न्यूनतम तापमान 15 डिग्री सेल्सियस से नीचे नहीं जाता, ज्वार रबी में भी उगाई जाती है। ज्वार की बुवाई पारंपरिक विधि से हल द्वारा या सीड ड्रिल का प्रयोग करते हुए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 25 सेंटीमीटर रखते हुए कर सकते हैं।

खाद एवं उर्वरक

अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु खेत में प्रति हेक्टेयर 10 से 15 टन अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद डालकर खेत को तैयार करते समय मिलाएं। एक कटान वाली फसल में प्रति हेक्टेयर 60 किलोग्राम नाइट्रोजन, 30 किलोग्राम फास्फोरस एवं 30 किलोग्राम पोटाश की आवश्यकता होती है तथा बहुकटान वाली फसल में प्रति हेक्टेयर 100 किलोग्राम नाइट्रोजन, 60 किलोग्राम फास्फोरस एवं 60 किलोग्राम पोटाश की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय देनी चाहिए तथा नाइट्रोजन की शेष मात्रा को प्रत्येक कटाई के बाद दो भागों में बांट कर देंना चाहिए। सल्फर की

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत किस्में		प्रमुख विशेषताएँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
एकल कटाई	सीएसएच–13–आर हाइब्रिड	द्विउद्देशीय	महाराष्ट्र	255
	सीवीएस–15	द्विउद्देशीय	आंध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान और तमिलनाडु	400
	हरियाणा चरी	द्विउद्देशीय	सम्पूर्ण भारत	305
	हरियाणा चरी–308	सूखा सहिष्णु, गर्मी और खरीफ दोनों के लिए उपयुक्त	सम्पूर्ण भारत	445
	जवाहर चरी–6	अत्यधिक नाइट्रोजन अनुक्रियाशील	मध्य प्रदेश	706
	पंत चरी–5	द्विउद्देशीय	सम्पूर्ण भारत	475
	पूसा चरी–1	द्विउद्देशीय, जल्दी और देर से बुवाई दोनों के लिए उपयुक्त	सम्पूर्ण भारत	276
	पंत चरी–3	द्विउद्देशीय	उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड	375
	पीसी–6	क्षारीय मृदा के लिए उपयुक्त	सम्पूर्ण भारत	342
	पीसी–9	सूखा और जल भराव के प्रति सहिष्णुता	सम्पूर्ण भारत	425
	राजस्थान चरी–1	गिरने के प्रति सहिष्णु	सम्पूर्ण भारत	445
	राजस्थान चरी–2	जल्द परिपक्वता	राजस्थान, गुजरात और हरियाणा	330
	यूपी चरी–1	कम एचसीएन (हाइड्रो रासायनिक अम्ल) की मात्रा	सम्पूर्ण भारत	330
बहु कटाई	सीओ (एफएस)–29	सूखा सहिष्णु, उच्च प्रोटीन और उच्च इनविट्रो शुष्क पदार्थ पाचनशक्ति	तमिलनाडु	500
	सीओ–27	रतूनिंग के लिए उपयुक्त	तमिलनाडु	400
	सीएसएच–20 एमएफ	खरीफ और गर्मी दोनों के लिए उपयुक्त	सम्पूर्ण भारत	650
	जीएफएस–1	मध्यम लवणता सहिष्णु	गुजरात	450
	हरासोना	प्रोटीन सामग्री में उच्च, एचसीएन में कम (175 पीपीएम से नीचे)	सम्पूर्ण भारत	575
	एमपी चरी	तेजी से पुनर्वृद्धि क्षमता	सम्पूर्ण भारत	430
	प्रोएग्रो चरी	अधिक कल्ले पैदा करने की क्षमता	सम्पूर्ण भारत	400
	पीसीएच –109	गर्मी और खरीफ दोनों के लिए उपयुक्त	सम्पूर्ण भारत	805
	पीसी–23	सूखा प्रतिरोधी और बाढ़ के प्रति सहिष्णु, खरीफ और गर्मी के मौसम में देरी से बुवाई के लिए उपयुक्त	सम्पूर्ण भारत	445
	रुचिरा	अच्छी साइलेज बनाने के लिए उपयुक्त	महाराष्ट्र	450

कमी वाली मृदा (10 पीपीएम उपलब्ध सल्फर) में 30–40 किग्रा. सल्फर प्रति हे. का प्रयोग, चारे की गुणवत्ता सुधारने में लाभकारी होता है।

सिंचाई:

वर्षा का वितरण असमान होने पर खरीफ फसल में 1–2 सिंचाई की आवश्यकता होती है। जायद में वाष्पोत्सर्जन अधिक होने के कारण 5–6 सिंचाई देने की जरूरत होती है। दक्षिणी भारत में फसल को रबी में 4 सिंचाई देते हैं। गर्मी के मौसम में उगाई गई ज्वार में पानी की कमी नहीं होनी चाहिए क्योंकि ज्वार के चारे में धुरिन नामक विषैले पदार्थ की मात्रा विशेषकर गर्मी के मौसम में अधिक हो जाती है।

खरपतवार प्रबंधन :

खरपतवार नियंत्रण के लिए एक गुड़ाई वीडर कम मल्चर से 3–4 सप्ताह बाद करें। एट्राजिन 0.5 किग्रा. सक्रिय तत्त्व/हे. (बुवाई के समय), 2, 4– डी–0.75 किग्रा. सक्रिय तत्त्व/हे. (बुवाई के 30–35 दिन बाद)– चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को नियंत्रित करने हेतु करें।

फसल सुरक्षा:

ज्वार में पाये जाने वाले मुख्य रोग एवं उनकी रोकथाम की जानकारी इस प्रकार है

जोनेट पत्ता धब्बा रोग (रोग जनकः ग्लोइओसर्कोस्पोरा सोरघाई)

इस रोग में लाल–भूरे रंग के छोटे धब्बे जिनका बाहरी भाग जैसे की पानी में भिगोया हुआ हो, बनते हैं। इसके बाद इनके चारो तरफ अर्ध–गोलाकार या गोल धब्बे बनते हैं। धब्बे व्यास में 3 इंच या उससे अधिक तक होते हैं। बैंगनी और भूरे रंग के चक्र वैकल्पिक रूप से पत्तों पर दिखाई देते हैं।

भूरा पत्ता धब्बा रोग (रोग जनकः सरकोस्पोरा सोरघाई)

इस रोग में छोटे लाल धब्बे बनते हैं जो बड़े होकर संकीर्ण, आयताकार, पत्तों की नसों से सीमित धब्बे बनाते हैं और पत्तों के खत्म होने का कारण बनते हैं। घाव का रंग गहरा लाल, बैंगनी या भूरा हो सकता है। बीजाणु बनने के कारण घाव भूरे रंग का दिखाई देता है।

एंथ्रेकनोस (रोग जनकः कोलिटोट्रीकम ग्रेमिनिकोला)

बैंगनी लाल रंग के ताजे धब्बे जो की गोल या अंडाकार होते हैं, छोटे बिंदुओं के रूप में पत्तों पर दिखाई देते हैं। पुराने धब्बे किनारे से काले बैंगनी और केंद्र में हल्के रंग के होते हैं। धब्बे मुख्य रूप से मध्य शिरा के पास ज्यादा आसानी से पहचाने जाते हैं।

ज्वार में रोग प्रबन्धन

- क्षेत्र के चारों ओर खरपतवार न उगने दें और फसल चक्र का पालन करें।
- खेत जोतते समय पुरानी फसल के मलबे को गड्ढे में दबा देना।
- प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग करें।
- कार्बेन्डाजीम 2 ग्राम/किलोग्राम बीज के साथ बीज उपचार के बाद प्रोपिकोनोजोल 0.1 प्रतिशत के दो छिड़काव करें।

चारे की फसल में दवा का छिड़काव् कम ही करना चाहिए तथा छिड़काव् के बाद 25–30 दिन तक फसल पशुओं को नहीं खिलानी चाहिए। बीमारियों की रोकथाम के लिए बुवाई से पूर्व बीज उपचार अवश्य करें इसके लिए बीज को 3 ग्राम थीरम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। ज्वार की फसल में शूट फ्लाई तथा तना छेदक कीट का अत्यधिक प्रकोप देखने को मिलता है अतः इसके नियंत्रण हेतु कार्बोफ्यूरान दवा की 10 किलो मात्रा को 10 किलो बालू के साथ मिलाके खड़ी फसल मे मिट्टी मे डालना चाहिए।

कटाई और एच.सी. एन. का प्रबंध

एक कटाई वाली प्रजातियों में बुवाई के 60–75 दिन (50 प्रतिशत फूल अवस्था) बाद कटाई करें। बहुकटाई वाली प्रजातियों में पहली कटाई 40–45 दिन पर तथा उसके बाद की कटाई 30 दिनों के अंतराल पर करें। चारे की अधिक पैदावार व गुणवत्ता के लिए कटाई 50% सिट्टे निकलने के पश्चात करें। एच.सी.एन. ज्वार में एक जहरीला तत्व प्रदान करता है। अगर इसकी मात्रा 2000 पी.पी.एम. से अधिक हो तो यह पशुओं के लिए हानिकारक हो सकता है। 35–40 दिन की फसल में एच.सी. एन की मात्रा अधिक होती है। लेकिन 40 दिन के बाद इसकी मात्रा कम होने लगती है इसलिए फसल की कटाई 40 दिन से पहले नहीं करनी चाहिए। अगर कटाई 40 दिन में करनी अत्यंत आवश्यक हो तो कटे हुए चारे को पशुओं को खिलाने से पहले 2–3 घंटे तक खुली हवा में छोड़ दें ताकि एच. सी.एन. की मात्रा कुछ कम हो सके। सिंचाई करने के बाद फसल की कटाई करने पर इस विषात्त पदार्थ की मात्रा काफी कम हो जाती है।

उपजः

वैज्ञानिक तरीके से उगाई गई ज्वार की एकल एवं द्विकटान वाली फसल से 250–450 कु./हे. एवं 500–700 कु./हे. बहुकटान वाली प्रजातियों से चारा उपज मिल जाती है।

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/01

भाकृअनुप ICAR | MILLETS 2023 | G20 | भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

ज्वार

संकलनकर्ताः

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

बाजरा

वानस्पतिक नाम: *पेनिसेटम ग्लौकम*

कुल: पोएसी

बाजरा उष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की भूमि में उगायी जाने वाली चारे की महत्वपूर्ण फसल है। यह स्वादिष्ट और पौष्टिक चारा प्रदान करता है। इसे पशुओं को हरे चारे अथवा साइलेज या हे के रूप में संरक्षित करके खिलाया जाता है। बाजरा के हरे चारे में शुष्क भार आधार पर, 7–10% क्रूड प्रोटीन, 56–64% एनडीएफ, 38–40% एडीएफ, 33–34% सेल्यूलोज एवं 18–23% हेमिसेल्युलोज पाया जाता है। मध्यम सूखा और मृदा में नमी की कमी की दशा में बाजरा की खेती करना मक्का और ज्वार की तुलना में अच्छा साबित होता है क्योंकि बाजरे में सूखारोधी क्षमता काफी अच्छी होती है। अतः शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्रों में जहाँ पानी की कमी रहती है वहाँ बाजरे की खेती लाभदायक साबित हो सकती है।

मृदा एवं उसकी तैयारी

बाजरे की खेती के लिए उत्तम जल निकास वाली बलुई दोमट और दोमट मृदा जिसका पी.एच. मान 6.5–7.5 हो वह उत्तम मानी जाती है। बाजरा अम्लीय मृदा के प्रति संवेदनशील है। खेत तैयार करने के लिए एक जुताई मिटटी पलट हल से फिर दो जुताई हैरो से करके पाटा लगा देना चाहिए जिससे की खेत खरपतवार रहित और ढेलामुक्त हो जाये। बाजरे की फसल जलभराव के प्रति भी संवेदनशील है अतः खेत में जलनिकासी का उचित प्रबंध होना चाहिए।

बुवाई का समय

सिंचित क्षेत्रों में गर्मियों में बुवाई के लिए मार्च से मध्य अप्रैल उपयुक्त समय है। खरीफ की फसल के लिए जुलाई का प्रथम पखवाड़ा उपयुक्त होता है। दक्षिण भारत में अक्टूबर से नवम्बर में बुवाई रबी के मौसम में की जाती है।

बीज दर

चारे की फसल की बुवाई 25 सेमी. की दूरी में पंक्तियों में सीडड्रिल से 1.5–2 सेमी. गहराई पर करना चाहिए। इसके लिए 10–12 किग्रा. बीज/हेक्टर पर्याप्त होता है। बुवाई से पूर्व बीज को एग्रोसान जीएन अथवा थीरम (3 ग्रा./किग्रा. बीज) से उपचारित करना चाहिए। बीज को एजोस्पिरिलम, एजोटोबैक्टर एवं पी.एस.बी (बेसिलस, स्यूडोमोनास) जैव उर्वरकों से उपचारित करके बोने से 15–20 प्रतिशत तक रासायनिक उर्वरकों की बचत होती है। बीज का जैव उर्वरकों से शोधन कवक नाशी और कीट नाशी दवाओं के शोधन के पश्चात ही करना चाहिए। जैव उर्वरक का 250 ग्राम का पैकेट 10 किलो बीज के शोधन के लिए पर्याप्त होता है जिसे गुड़ और पानी के घोल में मिलाकर बीजो के ऊपर डाल के अच्छे से मिला देते हैं जिससे मिश्रण की हल्की परत सभी बीजों में चढ़ जाए फिर शोधित बीजों को छाया में सुखाकर बोना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

सिंचित दशा में फसल की समुचित पोषक आवश्यकता पूरी करने के लिए 10 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट बुवाई से 20 दिन पहले तथा 50:30:30 किग्रा./हे. नत्रजन:फास्फोरस:पोटाश बुवाई के समय देना चाहिए। बुवाई के एक माह बाद 30 किग्रा. नत्रजन/हे. का छिड़काव खड़ी फसल में करना चाहिए। असिंचित

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत किस्में		प्रमुख विशेषताएँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
एकल कटाई	एएफबी–3	गिरने के प्रति सहिष्णु	उत्तर पश्चिम भारत	450
	एवीकेबी–19	द्विउद्देशीय	उत्तर पश्चिम भारत	380
	बायफ बाजरा–1	द्विउद्देशीय, डाउनी मिल्ड्यू, लीफ ब्लास्ट और लीफ स्पॉट रोगों के लिए मध्यम प्रतिरोधी	उत्तर पश्चिम और मध्य भारत	510
	एफबीसी–16	ऑक्सेलिक अम्ल की कम मात्रा	पंजाब	490
	एनडी,एफ–2	खरीफ और जायद मौसम के लिए उपयुक्त, सामान्य और लवण प्रभावित मिट्टी के लिए उपयुक्त	उत्तर प्रदेश	400
	पीसीबी–141	ऑक्सेलिक अम्ल की कम मात्रा	पंजाब	400
	राज बाजरा चरी–2	द्विउद्देशीय, लवणप्रभावित मिट्टी के लिए उपयुक्त	राजस्थान	300
	टीएसएफबी–15–4	अधिक सुपाच्य चारा	दक्षिण भारत	350
बहु कटाई	एपीएफबी–2	अत्यधिक पौष्टिक और स्वादिष्ट	आंध्र प्रदेश	300
	एनडीएफबी–5	दोनों खरीफ और जायद मौसम के लिए उपयुक्त, सामान्य और लवण प्रभावित मिट्टी के लिए उपयुक्त	उत्तर प्रदेश	505
	जायंट बाजरा	साइलेज बनाने के लिए भी उपयुक्त	संपूर्ण भारत	550
	जीएफबी–1	जायद मौसम के लिए उपयुक्त	गुजरात	1150
	पीएसी–981	रसीला तना और उच्च कल्ले पैदा करने की क्षमता	उत्तर पश्चिम और मध्य भारत	550
	बायफ बाजरा–1	द्विउद्देशीय, डाउनी मिल्ड्यू, लीफ ब्लास्ट और लीफ स्पॉट रोगों के लिए मध्यम प्रतिरोधी	उत्तर पश्चिम और मध्य भारत	510
	प्रोएग्रो नंबर 1	नर बंध्य संकर किस्म	संपूर्ण भारत विशेषतः आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और महाराष्ट्र	750
	मोती बाजरा	उच्च कल्ले पैदा करने और अच्छी पुनर्वृद्धि की क्षमता	तेलंगाना	634

दशाओं में बुवाई के समय उपयुक्त खाद एवं उर्वरक के अतिरिक्त वर्षा होने पर 20–30 किग्रा. नत्रजन/हे. का छिडकाव 30–35 दिन की अवस्था में करना चाहिए।

जल प्रबंधन

खरीफ की फसल में बारिश में ज्यादा अंतराल होने पर 1–2 सिंचाईयाँ की जा सकती है। परन्तु गर्मियों की फसल में वातावरण की वात्पोत्सर्जन माँग अधिक होने के कारण 4–5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

खरपतवार नियंत्रण

बाजरे की फसल में 25–30 दिन की अवस्था पर वीडर कम कल्वर से एक गुड़ाई करनी चाहिए। एट्राजीन/0.5–0.75 किग्रा./हे. सक्रिय तत्त्व 600 लीटर पानी का जमाव से पूर्व छिड़काव फसल के लिए प्रभावी होता है परन्तु बाजरा की लोबिया के साथ अन्तः फसल की स्थिति में 1 किग्रा. एलाक्लोर का बुवाई के पूर्व प्रयोग करना चाहिए।

फसल सुरक्षा

बाजरा में पाये जाने वाले मुख्य रोग एवं उनकी रोकथाम की जानकारी निम्नलिखित है:

डाउनी मिल्ड्यु (रोग जनकः स्कलेरोस्पोरा ग्रेमिनिकोला)

लक्षणः पीली व्यापक छिद्रें आधार से पत्तियों की नोक तक फैल जाती हैं। जैसे–जैसे बीमारी बढ़ती है, पत्ती की लकीरें भूरे रंग की हो जाती हैं और पत्तियाँ अपनी लंबाई की दिशा में टूट कर बिखर जाती हैं। गंभीर संक्रमण में, फफूंद का विकास पत्तियों की ऊपरी और निचली सतह पर देखा जा सकता है। संक्रमित पौधे बाली बनाने में असफल होते हैं और यदि बाली बनते भी है, तो वे हरी विकृत पत्तेदार संरचनाओं में बनते हैं। जैसे–जैसे बीमारी बढ़ती है, बाली की विकृत पुष्प संरचना भूरी और सूखी हो जाती है।

प्रबन्धन

- फसल कटाई के बाद रोगमुक्त बीज का उपयोग करें और खेत की उचित स्वच्छता बनाये रखें।
- जायंट बाजरा और पीएसी–981 जैसी प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग करें।
- प्रणालीगत कवकनाशी मेटाएक्सिल–एम 2.0 मिली/किलोग्राम बीज के साथ बीज उपचार और मेटलएक्सिल्मैंकोजेब/800 ग्रा./एकड़ का छिड़काव 200 लीटर पानी के साथ करें।

अरगट (रोग जनकः क्लेवीसेप्स फ्यूजिफोर्मिस)

लक्षणः पहले दिखाई देने वाला लक्षण संक्रमित पुष्प से चिपचिपी शहद की तरह बूंदें बाहर निकलना है। संक्रमण की गंभीरता के आधार पर एक पुष्पगुछी में एक, कुछ या सभी पुष्पकों पर बूंदों को देखा जा सकता है। धीरे–धीरे अनाज के स्थान पर मस्से जैसी फफूंद की संरचना (स्क्लेरोसिया) विकसित होती है। बाजरा अरगट के स्क्लेरोसिया हल्के गुलाबी या काले भूरे या काले रंग के होते हैं। ये बीज से बड़े होते हैं, और एक नुकीले शीर्ष के साथ पुष्पक में से निकलते हैं।

प्रबन्धन

- नमक (सोडियम क्लोराइड,10%) के घोल में बीज को 10 मिनट के लिए डुबोना चाहिए। जिससे स्क्लेरोसिया और खराब बीज अलग हो जाते हैं।
- मानसून की शुरुआत के साथ जून–जुलाई के दौरान जितनी जल्दी हो सके फसल को बोया जाना चाहिए।
- प्रोएग्रो नंबर–1, जाएंट बाजरा और पीएसी–981 जैसी प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग करें।

कीट व्याधि

फसल में शूट फ्लाई तथा तना छेदक कीट का अत्यधिक प्रकोप देखने को मिलता है। अतः इसके नियंत्रण हेतु कार्बोफ्यूरान दवा की 10 किलो मात्रा को 10 किलो बालू के साथ मिलाकर खड़ी फसल में मिट्टी में डालना चाहिए।

कटाई

एक कटाई वाली प्रजातियों में बुवाई के 60–75 दिन (50 प्रतिशत पुष्पावस्था) बाद कटाई करें। बहुकटाई वाली प्रजातियों में पहली कटाई 40–45 दिन पर तथा उसके बाद की कटाई 30 दिनों के अंतराल पर करें। वैज्ञानिक तरीके से उगायी गयी फसल से 300–450 कुंतल प्रति हेक्टेयर चारा प्राप्त होता है।

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/02

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

बाजरा

संकलनकर्ताः

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

मक्का

वानस्पतिक नामः *जिया मेज*

कुलः पोएसी

मक्का पूरे भारत वर्ष में सभी मौसम में उगाई जाने वाली एक आदर्श चारे की फसल है। यह तेजी से बढ़ने वाली और अधिक चारा उत्पादन देने वाली फसल है जिसका चारा काफी सुपाच्य और पोषक होता है जिसे फसल की किसी भी अवस्था में काटकर पशुओ को खिलाया जा सकता है। मक्के के चारे में औसतन 9–10 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 60–64 प्रतिशत एन.डी.एफ., 38–41 प्रतिशत ए.डी.एफ., 23–25 प्रतिशत हेमीसेल्यूलोज और सूखे के आधार पर 28–30 प्रतिशत सेल्यूलोज पाया जाता है। मक्के के चारे को हरी अवस्था में खिला सकते है या फिर हरे चारे का साइलेज बनाके संरक्षित कर सकते है।

मृदा एवं उसकी तैयारी

अच्छे जल निकास वाली समतल और उपजाऊ मृदा जिसका पी.एच. मान 6–7 हो वह मक्के की खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है। मक्के की फसल जलभराव और पानी की कमी दोनों अवस्था के लिए संवेदनशील है अतः मृदा में उचित नमी का होना अति आवश्यक है। मक्के के लिए खेत तैयार करने के लिए एक जुताई मिटटी पलट हल से फिर दो जुताई हैरो से करके पाटा लगा देना चाहिए जिससे की खेत खरपतवार रहित और ढेलामुक्त हो जाये।

बुवाई का समय

सिंचित क्षेत्रों में जायद की फसल के लिए फरवरी के अंतिम सप्ताह से लेकर मार्च का अंतिम सप्ताह बुवाई के लिए उपयुक्त होता है। खरीफ के मौसम में मक्के की बुवाई जून–जुलाई में की जाती है। भारत के पूर्व और दक्षिण भाग में मक्के की बुवाई मुख्य रूप से रबी के मौसम में अक्टूबर–नवंबर के दौरान की जाती है। जबकि, पहाड़ी क्षेत्रों में मक्के की बुवाई मई के महीने में की जाती है जिससे जुलाई–अगस्त में हरा चारा मिलता रहता है।

बीज दर एवं बुवाई

मक्का का बीज बडे आकार का होता है। इसके लिए 40–50 किग्रा. बीज/हे. की दर से उपयुक्त होता है। इसका बीज 30–40 सेमी. दूरी पर पंक्तियाँ में बोया जाना चाहिए।

अन्तः फसलीकरण

सामान्यतः मक्के के साथ लोबिया को 1:1 अथवा 2:2 की पंक्तियाँ में बोते हैं। कई क्षेत्रों में मक्के की फसल पंक्तियाँ में बोकर अतिरिक्त रूप से 15 से 20 किग्रा. लोबिया का बीज छिडक दिया जाता है। मिश्रित फसल में बुवाई के समय 35 किग्रा. नत्रजन तथा 40 किग्रा. फास्फोरस तथा घुटने की ऊँचाई की अवस्था पर 35 किग्रा. नत्रजन/हे. की दर से प्रयोग करना चाहिए।

जल प्रबंधन

मक्के की फसल जलभराव और पानी की कमी दोनों अवस्था के लिए संवेदनशील है अतः मृदा में उचित नमी का होना अति आवश्यक है। मक्के की फसल को गर्मी के मौसम में 5–6 सिंचाई 10–12 दिन के अंतराल में आवश्यक होती है। इसी प्रकार खरीफ के मौसम में 1–2 सिंचाई और रबी के मौसम में 3–4 सिंचाई की आवश्यकता होती है। जलभराव की समस्या से ग्रसित क्षेत्रों में मक्के की बुवाई मेड़–नाली विधि में करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

फसल में पोषक तत्वों का प्रबंधन एकीकृत तरीके से अर्थात जैविक और रासायनिक स्रोतों के समायोजन से करना चाहिए। सर्वप्रथम, खेत में बुवाई के पहले गोबर की सड़ी हुई खाद की 10–12 टन मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देना चाहिए। इसके अलावा मक्के की फसल को 80–100 किलो नत्रजन, 40 किलो फॉस्फोरस और 40 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत किस्में	प्रमुख विशेषताएँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
अफ्रीकन टाल	साल भर खेती के लिए उपयुक्त	संपूर्ण भारत	500
एपीएफएम–8	उच्च गुणवत्तायुक्त चारा	आंध्र प्रदेश	530
जे–1006	मध्यम परिपक्वता	पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और पश्चिमी उत्तर प्रदेश	410
प्रताप मक्का चरी–6	मध्यम परिपक्वता	उत्तर पश्चिम भारत	350
टीएसएफएम–15–5	पौधों का पुष्पन के बाद लम्बे समय तक हरा रहना	दक्षिण भारत	445
केडीएफएम–1	उच्च जैव भार	पहाड़ी क्षेत्र	450

नत्रजन की आधी मात्रा और फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा को बुवाई के समय एवं शेष नत्रजन को फसल की घुटने तक की अवस्था में देना चाहिए। जिंक की कमी वाली मृदाओं में 15–20 किलो जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय देना चाहिए। मक्के के बीज को एजोस्पिरिलम, एजोटोबैक्टर एवं पी.एस.बी (बेसिलस, स्यूडोमोनास) जैव उर्वरकों से उपचारित करके बोने से 15–20 प्रतिशत तक रासायनिक उर्वरकों की बचत होती है। बीज का जैव उर्वरकों से शोधन कवक नाशी और कीट नाशी दवाओं के शोधन के पश्चात ही करना चाहिए। जैव उर्वरक का 250 ग्राम का पैकेट 10 किलो बीज के शोधन के लिए पर्याप्त होता है जिसे गुड़ और पानी के घोल में मिलाकर बीजो के ऊपर डाल के अच्छे से मिला देते हैं जिससे मिश्रण की हल्की परत सभी बीजों में चढ़ जाए फिर शोधित बीजों को छाया में सुखाकर बोना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

खरपतवार नियंत्रण के लिए एक गुड़ाई वीडर कम मल्चर से बुवाई के 3–4 सप्ताह बाद करें। एट्राजिन 0.5 किग्रा. एक्टिव तत्त्व/हे. (बुवाई के समय), 2, 4 डी–0.75 किग्रा. एक्टिव तत्त्व/हे. (बुवाई के 30 –35 दिन बाद)– चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण हेतु करें।

कीट एवं रोग

पत्ता झुलसा रोग/उत्तरी पत्ता झुलसा रोग

रोग जनक: *हेल्मिंथोस्पोरियम टर्सीकम*

लक्षण : पत्तियों पर प्रारंभिक लक्षण जैसे की थोड़े अंडाकार पानी में भिगोये हुए छोटे धब्बे आसानी से पहचाने जा सकते हैं। ये विस्तारित होकर 1–2 इंच के आकार के नेक्रोटिक (काले–काले) धब्बों में बढ़ते हैं। यह पहले नीचे की पत्तियों पर दिखाई देते हैं और पौध के विकास के साथ–साथ इनकी संख्या में वृद्धि होती है, और बाद में मिलकर पूरे पत्ते को झुलसा सकते हैं।

रोग पत्ता झुलसा रोग/दक्षिणी झुलसा रोग

रोग जनकः *बाइपोलेरिस मेडीस/हेल्मिंथोस्पोरियम मेडीस*

लक्षण : नये धब्बे छोटे और हीरे के आकार के होते हैं। जैसे ही वे परिपक्व होते हैं, वे आकार में बड़े होते जाते हैं। धब्बों की बढ़ोत्तरी सटी हुई नसों से सीमित होती है और इसलिए अंत में धब्बे का आकार आयताकार और 2 से 3 सेमी. लंबा होता है। धब्बे आपस में मिलकर पत्ते के ज्यादातर भाग को झुलसा देते हैं।

प्रबन्धन

- अफ्रीकन टॉल और प्रताप मक्का चरी–6 जैसे प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग करें।
- विटावैक्स पावर 2 ग्राम/किग्रा. बीज के साथ बीज उपचार के बाद मैनकोजेब 0.25% के दो छिड़काव करें।

जीवाणु तना सड़न रोग

रोग जनकः एरविनिया केरेटोवोरा

लक्षणः यह बीमारी पौधों के निचले हिस्से से होती हुई ऊपर की ओर बढ़ती है। पौधों की पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं और मर जाती हैं एवं साथ में पौधे का तना भी सड़ जाता है।

प्रबन्धन

- रोगग्रसित पौधों को नष्ट कर दें।
- स्वस्थ एवं प्रतिरोधी प्रजातियों के बीज का उपयोग करें।
- 200 पीपीएम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (एन्टीबायोटिक) का उपयोग करें।

कीट

तना छेदक, शूट फ्लाई और फॉल आर्मीवर्म मक्के के महत्वपूर्ण कीट हैं। तना छेदक और शूट फ्लाई के नियंत्रण हेतु डाईमेथोक्सम दवा (0.4 मिली प्रति किलो बीज) से बीजोपचार करना चाहिए। खड़ी फसल मे तना छेदक और शूट फ्लाई के प्रकोप को कम करने के लिए कार्बोफ्यूरान दवा की 10 किलो मात्रा को 10 किलो बालू के साथ मिलाके खड़ी फसल मे मिट्टी मे डालना चाहिए। फॉल आर्मीवर्म के लिए इमामेक्टिन बेंजोएट की 0.4 ग्राम मात्रा एक लीटर पानी मे घोलकर खड़ी फसल मे छिड़काव करना चाहिए। नीम के तेल की 3 मिली मात्रा को 1 लीटर पानी मे घोलकर छिड़कने से भी कीटों के प्रकोप को कम किया जा सकता है।

कटाई एवं उपजः

चारे के लिये मक्का की कटाई सिल्क अवस्था से लेकर दूधिया अवस्था तक करने से गुणवत्ता एवं उपज अच्छी मिलती है। वैज्ञानिक तरीके से उगायी गयी फसल से 350–450 कुंतल/हे. चारा प्राप्त होता है।

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/03

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

मक्का

संकलनकर्ता:

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

लोबिया

वानस्पतिक नाम: *विग्ना अन्गुइकुलाटा*

कुल: लेग्यूमिनेसी

लोबिया तेज गति से बढ़ने वाली दलहनी चारा फसल है। अधिक पौष्टिकता एवं पाचकता से भरपूर होने के कारण इसे घासों के साथ मिलाकर बोने से उनकी पोषकता बढ़ जाती है। यह ऐसी फसल है जो मिट्टी को ढंक कर रखती है जिससे मृदा का अपरदन रुकता है और साथ ही खेत में खरपतवारों को बढ़ने का मौका नहीं मिलता है। इसको खरीफ तथा जायद मौसम में उगाया जा सकता है।

पोषकता

इसके हरे चारे में शुष्क भार आधार पर 20–24 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 43–49 प्रतिशत उदासीन अपमार्जक रेशा (एन.डी.एफ.), 34–77 प्रतिशत एसिड डिटर्जेन्ट रेशा तथा 23–25 प्रतिशत सेल्यूलोज तथा 5–6 प्रतिशत हेमिसेलुलोस होता है।

मृदा एवं उसकी तैयारी:

लोबिया सामान्यतः हल्की एवं अच्छे जल निकास वाली भूमियों में अच्छी उपज देती है। खेत तैयार करने के लिये हैरो या कल्टीवेटर से दो जुताईयां करने से अंकुरण जल्दी और अच्छा होता है।

उन्नत प्रजातियाँ

प्रजातियाँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा (टन/हे)
कोहिनूर	उत्तर भारत	30–40
श्वेता	महाराष्ट्र	35–40
बुन्देल लोबिया–2	सम्पूर्ण भारत	30–40
बुन्देल लोबिया–3	सम्पूर्ण भारत	30–40
एफ.सी.–8	तमिलनाडु	30–45
जी.एफ.सी.–1,2,3,4 एवं चरोडी	गुजरात	25–35
यू.पी.सी.–607, 618, 622	उत्तर पश्चिम, उत्तर पूर्व, पहाड़ी क्षेत्र	35–45
यू.पी.सी.–5287	उत्तर भारत	35–40
आई.एफ.सी.–8503, ई.सी.–4216	उत्तर भारत, पश्चिम और मध्य भारत	30–40
यू.पी.सी.–5286, 618	सम्पूर्ण भारत	30–45

बुवाई का समय:

गर्मियों की फसल के लिये बुवाई का उपयुक्त समय मार्च होता है। खरीफ मौसम में लोबिया की बुवाई वर्षा होने के पश्चात् जुलाई माह में करनी चाहिए।

बीज दर एवं दूरी

लोबिया चारे की फसल की बुवाई 25 से 30 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में हल के पीछे या सीडड्रिल से करनी चाहिए। लोबिया की एकल फसल लेने के लिए 35 से 40 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर उपयोग करते हुए बुवाई की जानी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

लोबिया दलहनी फसल होने से वातावरण की नाइट्रोजन से अपनी नत्रजन आवश्यकता पूर्ण कर लेती है। 20 किग्रा. नत्रजन तथा 60 किग्रा. फास्फोरस/हेक्टेयर बुवाई के समय देना चाहिए।

जल प्रबंधन

गर्मियों की फसल में 8 से 10 दिन के अंतराल पर 5–6 सिंचाई की आवश्यकता होती है। जबकि खरीफ मौसम में आमतौर पर सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन लम्बे अंतराल तक बारिश न होने की दशा में 10 से 12 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

लोबिया हेतु संस्तुत खरपतवारनाशी निम्न हैं:

ट्राईफ्लूरालिन (0.75 किग्रा. सक्रिय तत्व/हे.) के बीज उगने से पूर्व के छिड़काव से खरपतवारों की वृद्धि कम होती है।

रोग एवं कीट नियंत्रण

लोबिया में पाये जाने वाले मुख्य रोग एवं उनकी रोकथाम की जानकारी इस प्रकार है।

पेंडीमेथालिन	0.75–1.0 किग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर	बुवाई के 0–3 दिन तक	घास और चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार
इमेजाथापर	0.1 किग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर	बुवाई के 0–3 दिन बाद या बुवाई के 20–25 दिन बाद	घास और चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार

जड़ सड़न

रोग जनक: मैक्रोफोमिना फेजेओलीना

लक्षण

पौधे छोटे रह जाते हैं और भूमि से सटे हुए भाग में सड़न विकसित हो जाती है। बाद में जड़ें भी सड़ जाती हैं और पौधे सूख जाते हैं। परिपक्व लोबिया के पौधों में भूरे रंग के काले घाव पौधों के निचले तने और जड़ में दिखाई देते हैं, जिसमें छोटे स्क्लेरोसिया बनते हैं।

प्रबन्धन

- यूपीसी–5286, यूपीसी–607, यूपीसी–622 और यूपीसी–628 जैसी प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग करें।
- ट्रायकोडर्मा विरिडी 5 ग्राम/किग्रा. बीज के साथ बीज उपचार एफ.वाई.एम. 2 टन/हेक्टेयर का उपयोग करें।
- टेबुकोनाजोल 2 डीएस 1 ग्राम/किलोग्राम बीज अथवा एन.एस.के.ई. (नीम सीड कर्नल एक्सट्रेक्ट) 50 ग्राम/किग्रा. के साथ उपचार करें।

एंथ्रेकनोस

रोग जनक: कोलिटोट्रिकम लिंडेमूटीयनम

लक्षण

काले लाल किनारे के साथ भूरे रंग के गहरे धब्बे तने, शाखा, डंठल, फली और पत्तियों पर विकसित होते हैं। पत्ती की सतह पर पीले किनारे के साथ लंबे लाल धब्बे दिखाई देते हैं। गंभीर रूप से प्रभावित फली मुड़ जाती है और इसमें सामान्य आकार के बीज बनते हैं।

प्रबन्धन

- यूपीसी–5286, यूपीसी–607, यूपीसी–622 और यूपीसी–628 जैसी प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग करें।
- टेबुकोनाजोल 2 डीएस 1 ग्राम/किलोग्राम बीज अथवा एनएसकेई 50 ग्राम/किग्रा. बीज के साथ बीज उपचार के बाद 15 दिन अंतराल पर 0.1 प्रतिशत प्रोपिकोनोजोल के दो छिड़काव पत्तों पर करें।

लोबिया मोजैक रोग

रोग जनक: लोबिया मोजेक विषाणु (वायरस)

लक्षण

कई विषाणु लोबिया में बीमारी का कारण बनते हैं। ये विषाणु पत्तियों पर एक मोजेक पैटर्न (जो कि हरे और पीले रंग के धब्बों का मिश्रण होता है) उत्पन्न करते हैं। वे अकेले या दूसरों के साथ संयोजन में पाये जा सकते हैं। कुछ विषाणु मोटी और विकृत पत्तियाँ बनाते हैं। यदि यह बीमारी शुरुआती विकास चरण में पौधों पर हमला करती है, तो फली के बनने की उम्मीद बहुत कम होती है। लोबिया में सबसे आम विषाणु रोग लोबिया ऐफिड मोजेक है। यह एफिड्स (माहू) द्वारा फैलता है।

प्रबन्धन

- यूपीसी–5286, यूपीसी–607 और यूपीसी–622 जैसे प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग।
- 15 दिनों के अंतराल पर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 0.3 मिली/लीटर के दो छिड़काव चूसने वाले कीटों और पीले मोजेक विषाणु के संक्रमण को काफी कम कर सकते हैं। इसके बाद चूसने वाले कीटों के प्रबन्धन के लिए 10 दिनों के अंतराल पर वर्टिसिलियम लेकानी 5 ग्राम/लीटर के दो छिड़काव लोबिया बीज फसल में पीला मोजेक विषाणु को कम कर देता है।

कटाई एवं उपजः

खरीफ मौसम की फसल 50–60 दिन में तथा गर्मियों की फसल 70–75 दिन में कटाई (50 प्रतिशत पुष्पावस्था) करने के लिए तैयार हो जाती है। लोबिया की सामान्य फसल से 250–350 कु./हे तक हरा चारा प्राप्त हो जाता है।

प्रकाशकः
डॉ. अमरेश चन्द्रा
निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)
0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/09

भाकृअनुप ICAR | MILLETS 2023 | G20 | भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

लोबिया

संकलनकर्ता:
गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

ग्वार

वानस्पतिक नामः *सायमोप्सिस टेट्रागोनोलोबा*

कुलः लेग्यूमिनेसी

ग्वार एक बहुउद्देशीय दलहनी फसल है, जिसको चारे के अलावा हरी खाद, सब्जी एवं ग्वार गोंद के रूप में भी उगाया जाता है। यह सम्पूर्ण भारत में उगाई जाने वाली फसल है। सूखारोधी क्षमता होने के कारण ग्वार की फसल को शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में आसानी से उगाया जा सकता है।

पोषकता

दलहनी फसल होने के कारण ग्वार उत्तम गुणवत्ता का हरा चारा प्रदान करती है, जिसमें 17–20% क्रूड प्रोटीन, 42–48% एन.डी.एफ., 37–42% ए.डी.एफ., 23.5–25.3% सेल्युलोस एवं 8–12% हेमीसेल्युलोस पाया जाता है।

मृदा एवं उसकी तैयारी

ग्वार की खेती के लिए हल्की बलुई दोमट मृदा उत्तम मानी जाती है। ग्वार की फसल सूखारोधी होती है लेकिन इसमें जलभराव के प्रति सहनशीलता काफी कम होती है अतः खेत में जल निकासी का उचित प्रबंध रखना चाहिए। खेत की तैयारी हेतु 2–3 जुताइयाँ हैरो या कल्टीवेटर से करने के बाद पाटा लगा देना चाहिए जिससे की खेत समतल एवं ढेला तथा खरपतवार मुक्त हो जाये।

बीज एवं बुवाई

चारे हेतु ग्वार की बुवाई के लिए 30–35 किलोग्राम बीज/हे. पर्याप्त होता है। सिंचित क्षेत्रों में ग्वार की बुवाई 25 सेमी. पंक्ति के अंतराल में करनी चाहिए। बारानी एवं शुष्क क्षेत्रों में जहाँ नमी की कमी होती है वहाँ ग्वार की बुवाई हेतु 25–30 किलोग्राम/हे. बीज को 30 सेमी. पंक्ति अंतराल में बुवाई करते हैं। उत्तर भारत के सिंचित क्षेत्रों में जायद के दौरान ग्वार की बुवाई मार्च–अप्रैल के समय एवं खरीफ मौसम की बुवाई जून–जुलाई में करनी चाहिए। दक्षिण भारत में ग्वार की बुवाई रबी मौसम के दौरान अक्टूबर–नवंबर में करनी चाहिए।

फसल चक्र

ग्वार एक तीव्र वृद्धि करने वाली फसल है, जो कम समय में चारा प्रदान करती है अतः इसे विभिन्न फसल चक्रों में शामिल किया जा सकता है। ग्वार आधारित मुख्य फसल चक्र ज्वार+ग्वार–चारा जई, बाजरा+ग्वार– चारा जई, मक्का+ग्वार–चारा जई हैं। इसके अलावा ग्वार को बहुवर्षीय घास संकर बाजरा नेपियर/त्रिसंकर/गिनी घास आधारित चारा उत्पादन पद्धति के अनुरूप भी उगाया जा सकता है।

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत प्रजातियाँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
बुन्देल ग्वार–1, बुन्देल ग्वार–2 एवं बुन्देल ग्वार–3	हरियाणा, पंजाब और राजस्थान	280–345
ग्वार–80	पंजाब और हरियाणा	370
मरू ग्वार	पश्चिमी राजस्थान	225
एचजी–182	हरियाणा	295
ग्वार क्रांति	राजस्थान	340

खाद एवं उर्वरक

दलहनी फसल होने के कारण ग्वार वातावरण की नाइट्रोजन का स्थिरीकरण द्वारा अपनी नत्रजन आवश्यकता पूर्ण कर लेती है। फसल में पोषक तत्व पूर्ति के लिए 20 किग्रा. नत्रजन तथा 50 किग्रा. फास्फोरस/हे. बुवाई के समय देना चाहिए। बीज को बुवाई पूर्व राइजोबियम और फोस्फोबैक्टेरिया जैव उर्वरक की 250 ग्राम मात्रा प्रति 10 किलो बीज से उपचारित करने से फसल की वृद्धि और चारा उत्पादन अच्छा होता है, साथ ही मृदा का स्वास्थ्य भी उत्तम रहता है।

सिंचाई प्रबंधन

ग्वार को अपेक्षाकृत कम पानी की आवश्यकता पड़ती है। खरीफ में आवश्यकतानुसार एवं जायद में 3–4 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। दक्षिण भारत में रबी मौसम की फसल में 3–4 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है।

खरपतवार प्रबंधन

ग्वार की फसल में खरपतवार प्रबंधन हेतु निराई–गुड़ाई के अलावा पेंडीमेथलीन खरपतवारनाशी (0.75–1.0 किलो सक्रिय तत्व/हे.) का बुवाई के 0–3 दिन या इमेजाथापर खरपतवारनाशी (0.1 किलो सक्रिय तत्व/हे.) का बुवाई के 0–3 दिन या बुवाई के 20–25 दिन बाद छिड़काव करने से घास और चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की रोकथाम की जा सकती है।

रोग एवं कीट

ग्वार के मुख्य रोग जीवाणु पर्ण अंगमारी (ब्लाइट), आल्टरनेरिया पत्ती धब्बा, जड़ गलन, चूर्णिल आसिता हैं। फसल की जीवाणु पर्ण अंगमारी से रोकथाम के लिए स्ट्रेप्टोसायक्लीन (100 पी.पी.एम.) से बीजोपचार करना चाहिए। जड़ गलन एक भूमि जनित बीमारी है जो मुख्यतः कवक से होती है अतः इस रोग के प्रबंधन हेतु खेत की ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करनी चाहिए। इसके अलावा थीरम या बाविस्टिन कवकनाशी से बीजोपचार (2.5 ग्राम दवा प्रति किलो बीज) भी जड़ गलन रोग की रोकथाम में प्रभावी होता है। फसल पर घुलनशील गंधक 3 किग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से 15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करना चूर्णिल आसिता रोग के प्रबंधन में लाभदायक रहता है। ग्वार में लगने वाले मुख्य कीट माहूं, जैसिड, सफेद मक्खी, फली छेदक एवं पत्ती छेदक हैं। चारे की फसल में रसायनों के छिड़काव से बचना चाहिए। यदि छिड़काव किया जाना आवश्यक है तो छिड़काव के कम से कम 15–20 दिन बाद ही चारे का उपयोग करना चाहिए।

कटाई एवं उपज

ग्वार फसल की कटाई पुष्पावस्था या फली आने की अवस्था पर (बुवाई के 60–75 दिन बाद) की जा सकती है। इस प्रकार ग्वार से 300–350 कु. हरा चारा/हे. प्राप्त किया जा सकता है। बीज के लिए उगाई गई फसल से 10–15 कु./ हे. बीज की उपज प्राप्त की जा सकती है।

प्रकाशक:

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/10

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

ग्वार

संकलनकर्ता:

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

बरसीम

भारत में बरसीम सबसे महत्वपूर्ण शीतकालीन दलहनी चारा फसलों में से एक है। उत्तर भारत की सिंचित स्थिति के लिए बरसीम को चारे की फसलों का राजा के रूप में जानी जाती है, क्योंकि इससे नवंबर से मई तक 6–7 महीने के लिए चारा (4–6 कटाई) उपलब्ध होता है।

पोषकता

बरसीम में 50% पुष्पावस्था में सूखे चारे के आधार पर 17–22% प्रोटीन, 47–49% एन.डी.एफ., 35–38% ऐ.डी.एफ., 24–25% सेलुलोज और 7–10% हेमिसेलुलोज होता है। बरसीम का चारा स्वादिष्ट, पौष्टिक, और पाचक होता है। इसके चारे में प्रोटीन की मात्रा भरपूर होने के कारण इसको अदलहनी चारा जैसे जई के साथ मिलाके खिलाना एक अच्छी तकनीक है क्योंकि इससे पशुओं को प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट एवं खनिज तत्व संतुलित मात्रा में मिलते है जिससे पशुओं का स्वास्थ्य एवं उत्पादकता अच्छी होती है।

जलवायु एवं मृदा

बरसीम ठंडी जलवायु के अनुकूल है। ऐसी जलवायु ।र्दी व बसंत मौसम में उत्तरी भारत में पाई जाती है जो उत्पादक क्षेत्र के रूप में जाना जाता है। बरसीम की बुवाई तथा विकास के लिए ईष्टतम तापमान 20–25 डिग्री सेल्सियस है। बरसीम के लिए अच्छी जल निकास वाली क्ले व क्ले दोमट मिट्टी, ह्यूमस, कैल्सियम व फास्फोरस युक्त ज्यादा उपयुक्त है। अपेक्षाकृत भारी मिट्टी उच्च जल धारण क्षमता के कारण अच्छी मानी गई है। बरसीम को क्षारीय मृदा में भी उगाया जा सकता है। पहली जुताई मिटटी पलटने वाले हल से तथा बाद की 2 या 3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करें। बरसीम को जब बीज के लिए लाइनों में बोते हैं तो इसके लिए भुरभुरी बीज की जरूरत होती है।

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत किस्में	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
मेसकावी, वरदान, पूसा जायंट	संपूर्ण भारत	675–725
जेबी–1, 2, 3, यूपीबी–110, बीबी–2	मध्य भारत	650–850
बीसी–180, जेबी–1	उत्तर पश्चिम क्षेत्र	750–850
बीसी–180, बीबी–3 , बीएल–1, 2, 10, 22	पहाड़ी क्षेत्र	650–750
जेएचबी–17–1, जेएचबी–17–2	उत्तर पूर्व और उत्तर पश्चिम क्षेत्र	800–850

बुवाई का समयः

बुवाई का समय एक महत्वपूर्ण कारक है जो अंकुरण, कटाई की संख्या तथा उत्पादन को प्रभावित करता है। जब तापमान 25–27 डिग्री सेल्सियस हो तब बुवाई करनी चाहिए इसलिए पंजाब, हरियाणा व उत्तर प्रदेश में बोने का उचित समय अक्टूबर है। बंगाल व गुजरात में फसल को नवम्बर में बोया जा सकता है। पूर्वी क्षेत्रों में दिसम्बर के प्रथम सप्ताह तक बुवाई की जा सकती है।

बीज एवं बुवाई

सामान्य स्थिति में बरसीम की ईष्टतम बीज दर 25 किग्रा./हे. है। बुवाई के लिए बेड़ में 4–5 सेमी. की गहराई तक पानी भरें। हल्की पडलिंग करें। रातभर भीगे हुए बीजों का पड़ल्ड खेत में छिड़काव करें। बुवाई शाम को या जब हवा नहीं चले तब करें। बीज को बुवाई पूर्व राइजोबियम और फोस्फोबैक्टीरिया जैव उर्वरक की 250 ग्राम मात्रा प्रति 10 किलो बीज से उपचारित करने से फसल की वृद्धि और चारा उत्पादन अच्छा होता है साथ ही मृदा का स्वास्थ्य भी उत्तम रहता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

बरसीम से भरपूर चारा उत्पादन हेतु 15–20 टन/हे. सड़ी गोबर की खाद को खेत की तैयारी पूर्व मिला दें। तत्पश्चात मृदा जांच अनुसार या 20:60:30 किलो नत्रजन, फॉस्फोरस और पोटाश उर्वरकों को अंतिम जुताई के समय खेत में मिलाना चाहिए।

जल प्रबंधन

बरसीम ज्यादा पानी चाहने वाली फसल है। अक्टूबर से फरवरी माह तक प्रत्येक 12–16 दिन में तथा मार्च और अप्रैल माह में 8–12 दिन के अंतराल में सिंचाई करनी चाहिए। इस प्रकार फसल के पूरे जीवनकाल में लगभग 13 से 15 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

खरपतवार प्रबंधन

बरसीम में खरपतवार प्रबंधन हेतु कासनी मुक्त बीज का प्रयोग करना चाहिए। खरपतवारनाशी के रूप में इमेजाथापर (परसुइट 10% एस एल) 0.10 किलो सक्रिय तत्व प्रति हे. दवा को बुवाई के 20–25 दिन बाद छिड़काव करना चाहिए। बरसीम के बीज के साथ सरसों या राया का बीज मिलाकर बोने से खरपतवारों की वृद्धि कम होती है। खरपतवारों की वृद्धि कम करने के लिए बुवाई उपयुक्त समय पर ही करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

बरसीम में पाये जाने वाले मुख्य रोग एवं उनकी रोकथाम की जानकारी इस प्रकार है:

जड़ गलन

रोग जनक: राइजोक्टोनिया सोलानी, फुजेरियम सेमिटेक्टम और मैक्रोफोमिना फेजेओलीना नामक कवक

लक्षण

जड़ों पर हल्के भूरे रंग के नेक्रोटिक (काले–काले) धब्बे आमतौर पर मिट्टी की सतह से 5 सेमी. नीचे बनते हैं और बाद में मिलकर सड़न का रूप ले लेते हैं। इस बीमारी से प्रभावित पौधों को खेत में आसानी से देखा जा सकता है क्योंकि वे छोटे और जले हुए पौधों के धब्बे बनाते हैं।

तना गलन

रोग जनक: स्क्लेरोटिनिया ट्राईफोलिओरम

लक्षण

इस बीमारी में पत्तियाँ सूखने से पहले जैतून–खाकी–भूरे रंग की हो जाती हैं और कवक जाल से ढक जाती हैं। कवक जाल डंठल और तने के माध्यम से बढ़ता हुआ अंततः मुख्य जड़ में प्रवेश कर जाता है। बरसीम सड़न संक्रमण पौधों के बीच भी कवक जाल के माध्यम से फैल सकता है। इस प्रकार खेत में मृत पौधों के चकत्ते बन जाते हैं। संक्रमित और

मृत पौधे खाकी कवक जाल द्वारा ढक जाते हैं, जिसमें काले स्क्लेरोसिया मिट्टी के स्तर पर मृत पौधे के ऊतक में या मृत पौधों के नजदीक मिट्टी में बनते हैं। जिससे यह मृदा जनित रोग बन जाता है।

प्रबन्धन

- फसल में उचित जल निकासी का प्रबंध करना चाहिए।
- तना सड़न रोग जनक के मिट्टी में स्थित कवक संरचनाओं (स्क्लेरोसिया) को नष्ट करने के लिए ग्रीष्म कालीन जुताई की जानी चाहिए।
- तना और जड़ सड़न के लिए प्रतिरोधी प्रजातियां जैसे बुन्देल बरसीम–3 का उपयोग करें।
- कार्बेंडाजीम 2 ग्राम/किलोग्राम के साथ बीज उपचार और कार्बोफुरान 3 जी 1 ग्राम/मीटर पंक्ति के साथ मृदा उपचार करने के बाद नीम सीड केर्नेल एक्सट्रेक्ट (5 प्रतिशत) का पत्तों पर
- छिड़काव कटाई के हर 15 दिन बाद करना चाहिए या बेविस्टिन और थिरम 2 ग्राम/किग्रा. बीज या ट्रायकोडर्मा वेरेडी 5 ग्राम/किलोग्राम के साथ बीज बायो प्राइमिंग और नीम खली (400 किलोग्राम/हेक्टेयर) का उपयोग करना चाहिए।

चने के सूण्डी: इस कीट का लार्वा पौधों की पत्तियों और फूलों को खाता है। इसकी रोकथाम के लिए

एमामेक्टिन बेंजोएट 5% एस जी (0.4 ग्राम प्रति लीटर पानी) या नोवलूरॉन 10% ई.सी. (1 मिली प्रति लीटर पानी) दवा का घोल बनाकर छिड़काव करें। कीट का प्रकोप ज्यादा होने पर आवश्यकतानुसार दूसरा स्प्रे 15 दिन बाद भी कर सकते है। दवा के छिड़काव के बाद चारे को कम से कम 15 दिन बाद ही काटके पशुओं को खिलाना चाहिए।

कटाई एवं चारा उपज: पहली कटाई 50 दिन पर तथा उसके बाद की 5–6 कटाई 25–30 दिनों के अंतराल पर करें। वैज्ञानिक तरीके से उगायी गयी फसल से 800–1100 कुंतल हरा चारा/हे. प्राप्त होता है।

प्रकाशक:

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/12

भाकृअनुप ICAR

MILLETS 2023

भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

बरसीम

संकलनकर्ता:

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

रिजका

वानस्पतिक नामः *मेडिकागो सटाइवा*

कुलः लेग्यूमिनेसी

रिजका या लूसर्न सिंचित क्षेत्रों में रबी के मौसम में उगाई जाने वाली दलहनी चारे की महत्पूर्ण फसल है। गुणवत्ता और चारा उत्पादन क्षमता के अलावा इसकी विविध जलवायु एवं मृदाओं में उगाये जाने की क्षमता के कारण रिजका को चारा फसलों की रानी माना जाता है। भारत में रिजका को मुख्य रूप से पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडु एवं लद्दाख में उगाया जाता है। गहरी जड़ प्रणाली की वजह से लूसर्न शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्रों में पानी की कम उपलब्धता की स्थिति में उत्तम फसल मानी जाती है। ऐसे क्षेत्र जहाँ जलस्तर काफी ऊपर होता है वहाँ रिजका की खेती वर्ष आधारित या बारानी तौर पर भी की सकती है। बरसीम की तुलना में रिजका काफी लम्बे समय तक (नवंबर से जून) तक हरा चारा प्रदान करती है।

पोषकता

रिजका एक बहुवर्षीय हरे चारे की फसल है जिसके चारे की गुणवत्ता उत्तम होती है। इस चारा फसल में दलहन फसलों की तरह फली लगती है, जिसमें प्रोटीन और अन्य खनिज प्रचुर मात्रा में होते हैं। इसके चारे में लगभग 15% क्रूड प्रोटीन होती है और शुष्क पदार्थ की पाचकता लगभग 72% होती है।

जलवायु एवं मृदा

रिजका शीतोष्ण कटिबंधीय जलवायु की फसल है लेकिन इसकी खेती विविध तापमान में की जा सकती है। यह उत्तर भारत में कम तापमान से लेकर दक्षिण भारत के सामान्य तापमान पर आसानी से उगाई जा सकती है। रिजका की खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। हालाँकि, उत्तम जल निकास वाली उर्वर एवं सामान्य पी.एच मान वाली मृदा उत्तम होती है। रिजका की खेती क्षारीय मृदा में सफलतापूर्वक नहीं की जा सकती लेकिन मध्यम अम्लीय मृदा में चूने के प्रयोग के बाद लूसर्न को उगाया जा सकता है। रिजका की खेती ज्यादा भरी मृदा जिसमे जलभराव की समस्या रहती हो वह अनुपयुक्त मानी जाती है। रिजका की खेती के लिए समतल और भुरभुरे खेत की जरुरत होती है। खेत की तैयारी हेतु प्रारंभिक भू–परिष्करण मिट्टी पलट हल से करके 2–3 जुताई हैरो से करके पाटा लगा देना चाहिए जिससे खेत खरपतवार और ढेला मुक्त एवं समतल हो जाये।

बीज एवं बुवाई

रिजका की बुवाई सितम्बर अंत से लेकर दिसंबर की शुरुआत तक किसी भी समय की जा सकती है लेकिन मध्य अक्टूबर सबसे उपयुक्त होता है। लूसर्न की बुवाई हेतु लगभग अच्छी गुणवत्ता वाले 20–25 किग्रा. बीज की आवश्यकता छिटकवां विधि से बुवाई के तहत होती है जबकि पंक्ति में बुवाई हेतु 12–15 किलो बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। लूसर्न की पंक्ति में बुवाई 25–30 सेमी. के अंतराल में सीडड्रिल या हाथ से ज्यादा से ज्यादा 1–1.5 सेमी. गहराई पर करनी चाहिए। बीज को बुवाई पूर्व राइजोबियम और फोस्फोबैक्टीरिया जैव उर्वरक की 250 ग्राम मात्रा प्रति 10 किलो बीज से उपचारित करने से फसल की वृद्धि और चारा उत्पादन अच्छा होता है साथ ही मृदा का स्वास्थ्य भी उत्तम रहता है।

खाद एवं उर्वरक

बुवाई से पहले खेत में 15–20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद मिलाना चाहिए। दलहनी चारा होने के कारण रिजका मृदा में काफी मात्रा में वायुमण्डलीय नत्रजन का स्थिरीकरण करता है और कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करता है तथा मृदा कटाव को भी रोकता है। रिजका को 20 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस और 40 किग्रा. पोटाश/हे. की आवश्यकता होती है। यह सभी

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत प्रजातियाँ	प्रमुख विशेषताएँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
चेतक	माहू के प्रति सहिष्णु, त्वरित पुनर्वृद्धि क्षमता	हरियाणा, गुजरात, राजस्थान, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश	1210 (प्रति वर्ष)
आनंद ल्यूसर्न–3	आरएल–88 और आनंद–2 की तुलना में उच्च पुनर्वृद्धि क्षमता	गुजरात और महाराष्ट्र के उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र	1200 (प्रति वर्ष)
आनंद ल्यूसर्न–4	गिरने के प्रति सहिष्णु	उत्तर पश्चिम क्षेत्र	567 (प्रति मौसम)
आनंद–2	जोरदार वृद्धि, मौसमी और वार्षिक खेती के लिए उपयुक्त	गुजरात, राजस्थान और महाराष्ट्र	950 (प्रति वर्ष)
आनंद–3	गिरने और ठंढ के प्रति प्रतिरोधी, और फॉस्फेट के लिए अत्यधिक प्रतिक्रियाशील	किन्नौर एवं लाहुल और स्पीति घाटी का ठंडा शुष्क क्षेत्र	500 (प्रति मौसम)
सीओ–1	अमरबेल से मुक्त	उत्तर पश्चिम क्षेत्र	1250 (प्रति वर्ष)
सीओ–2	सीओ–1 की तुलना में कम अंतराल पर कटाई अधिक बीज उपज	गुजरात, राजस्थान और महाराष्ट्र	1350 (प्रति वर्ष)
जीएयू–एल–2	कोमल फफूंदी के लिए प्रतिरोधी	किन्नौर एवं लाहुल और स्पीति घाटी का ठंडा शुष्क क्षेत्र	950 (प्रति वर्ष)
एलएल कम्पोजिट–3	सामान्य बुवाई की स्थिति के लिए उपयुक्त	तमिलनाडु	700 (प्रति मौसम)
एलएल कम्पोजिट–5	कोमल फफूंदी के लिए काफी प्रतिरोधी	तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक	750 (प्रति मौसम)
कृष्णा	क्रूड प्रोटीन की अधिक मात्रा	गुजरात	1300 (प्रति वर्ष)
आरएल–88	त्वरित पुनर्वृद्धि, अन्य किस्मों की तुलना में अधिक जोरदार पौधे	भारत के सभी रिजका उत्पादक क्षेत्र	1220 (प्रति वर्ष)
सीओ–4	उच्च गुणवत्ता और अधिक पाचनशक्तियुक्त चारा	पंजाब	608 (प्रति मौसम)
आलमदार–51	उच्च तापमान (48–50 डिग्री सेल्सियस) वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त, गिरने के लिए प्रतिरोधी	उत्तर पश्चिम क्षेत्र	600 (प्रति मौसम)

उर्वरक फसल की बुवाई के समय देने चाहिए। हलकी मृदाओ में उगाई जाने वाली रिजका की फसल में अक्सर बोरोन की कमी के लक्षण पाए जाते है। बोरोन की कमी की दशा में 0.2 प्रतिशत बोरेक्स का छिड़काव फसल में करना चाहिए। ऐसी मृदाओ में जहाँ जल निकासी की व्यवस्था पर्याप्त नहीं होती है वहाँ लोहा की कमी के लक्षण रिजका में दिखाई देते है। उपयुक्त समय पर बुवाई और खेत में चूने का प्रयोग ऐसी दशा

में लाभकारी होता है। जैव नत्रजन स्थरीकरण की तीव्रता को बढ़ाने के लिए सल्फर और जिंक की 20 किलो प्रति हेक्टेयर मात्रा 2 किलो मोलिब्डेनम के साथ देना लाभकारी होता है।

जल प्रबंधन

रिजका में अच्छे जमाव के लिए बुवाई पूर्व सिंचाई (पलेवा) करनी चाहिए। रिजका को समुचित जमाव में थोड़ा समय लगता है इसलिए जमाव की शुरुआती समय में 7–10 दिन के अंतराल में मृदा में नमी की उपलब्धता के आधार पर निरंतर सिंचाई करते रहने चाहिए। बाद में सिंचाई का यह अंतराल 25–30 दिन तक बढ़ाया जा सकता है। गर्मी के दौरान 15–20 दिन के अंतराल में सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार से रिजका को एक वर्ष में लगभग 15–20 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है।

खरपतवार प्रबंधन

रिजका की शुरुआती वृद्धि अवस्था में खरपतवारों की समस्या काफी होती है। इसलिए, बुवाई के 20–25 दिन के बाद निराई–गुड़ाई करना आवश्यक होता है। पेंडीमेथलीन खरपतवारनाशी की 1–2 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर अंकुरण पूर्व बुवाई के तुरंत बाद एवं 5–10 दिन बाद डाईक्वाट खरपतवारनाशी की 6–10 किग्रा. मात्रा लूसर्न में कस्कुटा या अमरबेल खरपतवार को नियंत्रित करने में काफी सहायक होता है।

रोग एवं कीट प्रबंधन

रिजका में पाये जाने वाले मुख्य रोग एवं उनकी रोकथाम निम्न प्रकार है

रतुआ रोग (रोग जनकः यूरोमाइसेस स्ट्राइएटस)

लक्षण

छोटे, गोल, पाउडर की तरह लाल भूरे या गहरे धब्बेयुक्त गाँठ, ज्यादातर पत्तियों के नीचे की तरफ बनती हैं। ये गाठें डंठल और तने पर भी दिखाई दे सकती हैं। गंभीर रूप से संक्रमित पत्तियाँ पीली होकर सूख जाती हैं और समय से पहले गिर जाती हैं।

डाउनी मिल्ड्यू (रोग जनकः पेरिनोस्पोरा ट्राईफोलिओरम)

लक्षण

तेजी से बढ़ते पौधों के नये पत्तों पर हल्के हरे रंग के धब्बे बनते हैं और यदि बीमारी गंभीर होती है, तो पत्ते नीचे मुड़ जाते हैं। पत्तों के नीचे की ओर पीला, बैंगनी कवक जाल दिखाई देता है।

प्रबंधन

- चेतक, आनंद, जी ए यूएल–2, लुर्सन–3 और आर आरबी–07–1 जैसे प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग करें।
- बीज की भरपूर उपज के लिए 15 दिनों के अंतराल पर मैनकोजेब 2.5 ग्राम/लीटर और टेब्यूकोनाजोल 0.5 मिली/लीटर का वैकल्पिक रूप से छिड़काव करना चाहिए।

रिजका में रोगों के अलावा वीविल और माहू कीट भी लगते है जिनको नीम के तेल की 30 मिली मात्रा प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़कने से नियंत्रित किया जा सकता है।

कटाई प्रबंधन और उत्पादन

रिजका की पहली कटाई बुवाई के 50–55 दिन बाद एवं उसके बाद की कटाइयाँ 25–30 दिन के अंतराल पर लेते हैं। लूसर्न को पौधे की ऊँचाई 60 सेमी. होने पर जमीन की सतह से काटते हैं। इस प्रकार से एक वर्ष में 7–10 कटाइयों द्वारा 800–1200 कुंतल प्रति हेक्टेयर हरा चारा या 180–200 कुंतल प्रति हेक्टेयर सूखा चारा प्राप्त हो जाता है। रिजका की बहुवर्षीय प्रजातियों से 3–4 वर्ष तक हरे चारे की कटाई की जा सकती है।

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/05

भाकृअनुप ICAR | MILLETS 2023 | G20 | भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

रिजका

संकलनकर्ताः

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरुषोत्तम शर्मा, साधना पांडे, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिस्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव, रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

जई

वानस्पतिक नाम: एवेना सटाइवा

कुल : पोएसी

जई का चारा बहुत ही मुलायम, स्वादिष्ट, सुपाच्य और पोषक होता है क्योंकि इसमें 10–12 प्रतिशत प्रोटीन, 60–70 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स और प्रचुर मात्रा में खनिज तत्त्व पाए जाते हैं। पशुओं को संतुलित आहार प्रदान करने हेतु चारा जई की खेती करना बहुत की अच्छा अवसर हो सकता है।

जलवायु एवं मृदा

जई ठंडी जलवायु में उगायी जाने वाली चारा फसल है। इसकी खेती के लिए 15–25°C तापमान सर्वोत्तम माना जाता है। गर्म एवं शुष्क जलवायु का इसकी उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। जई के लिए उत्तम जल निकास वाली समतल एवं उपजाऊ मृदा जिसका पी.एच. मान 6–7.3 हो वह अच्छी मानी जाती है। खेत की तैयारी हेतु सर्वप्रथम मिट्टी पलट हल से जुताई करनी चाहिए फिर 2–3 जुताइयाँ हैरो या कल्टीवेटर से करके पाटा लगा देना चाहिए।

उन्नतशील प्रजातियाँ

- बुन्देल जई– 822 (जे.एच.ओ–822): मध्य भारत, एक कटान
- बुन्देल जई – 851 (जे.एच.ओ–851): सम्पूर्ण भारत, बहुकटान
- बुन्देल जई– 2004 (जे.एच.ओ– 2000–4)
- बुन्देल जई–99–1 (जे.एच.ओ– 99–1): सम्पूर्ण भारत, एककटान
- बुन्देल जई–99–2 (जे.एच.ओ– 99–2): उत्तर–पूर्वी और उत्तर–पश्चिमी भारत, एककटान
- बुन्देल जई–2010–1 (जे.एच.ओ– 2010–1): दक्षिण भारत, एककटान
- बुन्देल जई 2009–1 (जे.एच.ओ– 2009–1): मध्य भारत, एककटान
- बुन्देल जई 2012–2 (जे.एच.ओ– 2012–2): दक्षिण भारत, एककटान

अन्य: केंट (संपूर्ण भारत,एककटान), एच.एफ.ओ–114 (संपूर्ण भारत,एककटान), यू.पी.ओ.–212 (बहुकटान), यू.पी.ओ. 94 (बहुकटान), हरियाणा जई–8 (बहुकटान), ओ.एस.–6, ओ.एस.–7, ओ.एस. 377

बीज एवं बुवाई

जई की बुवाई का उत्तम समय 20 अक्टूबर से 10 नवम्बर तक माना गया है। जई की बुवाई के लिए 75–80 किग्रा. बीज/हे. की दर से पर्याप्त होता है। बड़े व मोटे दाने की किस्मों के लिए 100–125 किग्रा. /हे. बीजदर अनुशंसित है। हल के पीछे या सीड ड्रिल से 20–25 सेमी. पंक्ति से पंक्ति की दूरी पर 3–4 सेमी. गहराई पर बीज की बुवाई करनी चाहिए।

पोषक तत्व प्रबंधन

बुवाई से पूर्व खेत की तैयारी के समय 10–15 टन/हे. की दर से अच्छी सड़ी गोबर की खाद् डालें। दो या अधिक कटान वाली प्रजातियों में क्रमश: 120:60:40 किलो तथा एक कटान की प्रजाति के लिए 80:60:40 किलो नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश की आवश्यकता होती है। फास्फोरस व पोटाश की पूरी एवं नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय देनी चाहिए। शेष नत्रजन की मात्रा दो भाग में पहली बुवाई के 30 दिन बाद तथा दूसरा भाग कटाई के तुरंत बाद दें।

सिंचाई प्रबंधन

सामान्यता जई में 4–5 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है परन्तु बहु–कटान प्रजातियों में 6–8 सिंचाई देने से पैदावार अच्छी रहती है।

खरपतवार प्रबंधन

जई में गेंहूँ कुल के अनेक खरपतवार पाये जाते है। उसके लिए बुवाई के चार सप्ताह बाद वीडर कम मल्वर से गुड़ाई करें। तत्पश्चात 2, 4–डी का 0.5 किग्रा./हे. या मेटसल्फ्यूरान 8 ग्राम/हे. सक्रिय पदार्थ का 4–5 सप्ताह की अवस्था पर छिड़काव करें।

रोग एवं कीट प्रबंधन

जई का जड़ गलन एवं लीफ ब्लाईट से बचाव के लिए बीज को थीरम (3 ग्राम/किलो बीज से उपचारित करके बुवाई करें। डाइमेथोएट 30 ई.सी. का 0.3: की दर से 500 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव एफिड नियंत्रण के लिए करना चाहिए।

कटाई

एककटान प्रजातियों की कटाई 50 प्रतिशत पुष्पावस्था (90–110 दिन) पर करें। दोकटान वाली प्रजातियों की प्रथम कटाई 50–60 दिन बाद तथा दूसरी कटाई 50 प्रतिशत पुष्पावस्था पर। बहुकटान वाली प्रजातियों की प्रथम कटाई 50–60 दिन बाद, दूसरी कटाई अगले 40–45 दिन बाद तथा तीसरी कटाई 50 प्रतिशत पुष्पावस्था पर करनी चाहिए। कटाई जमीन से 8–10 सेमी. ऊपर से करनी चाहिए जिससे की कटे हुए भाग से पुनर्वृद्धि अच्छे से हो सके। बीज उत्पादन के लिए जई को प्रथम कटाई के बाद बीज के लिए छोड़ देना चाहिए।

बुन्देल जई-822 (जे.एच.ओ.-822)

बुन्देल जई-851 (जे.एच.ओ.-851)

बुन्देल जई-2000-4 (जे.एच.ओ.-2000-4)

बुन्देल जई-99-1 (जे.एच.ओ.-99-1)

उत्पादन

एक कटानः	300–450 कु./हे. हरा चारा
दोकटानः	400–550 कु./हे. हरा चारा
बहुकटानः	450–600 कु./हे. हरा चारा
बीज उत्पादनः	20–25 कु./हे.

बुन्देल जई-99-2 (जे.एच.ओ.-99-2)

बुन्देल जई-2010-1 (जे.एच.ओ.-2010-1)

बुन्देल जई-2009-1 (जे.एच.ओ.-2009-1)

बुन्देल जई-2012-2 (जे.एच.ओ.-2012-2)

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/20

भाकृअनुप ICAR

भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

जई

संकलनकर्ताः

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

गिनी घास

वानस्पतिक नामः *मेगाथाईरस मैक्सिमस/पेनिकम मैक्सिमम*

कुलः पोएसी (ग्रेमिनी)

गिनी एक बहुवर्षीय घास है जिसका उत्पत्ति स्थान उष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय अफ्रीका है। गिनी घास काफी हद तक सूखे को सहन कर सकती है क्यूंकि इसकी जड़प्रणाली काफी गहरी होती है। यह एक महत्वपूर्ण चारे की फसल है जिसमे पत्ती का तने के तुलनात्मक अच्छा अनुपात होता है और इसका चारा काफी स्वादिष्ट, पाचक और पौष्टिक होता है। इसके हरे चारे में 10% तक क्रूड प्रोटीन पाई जाती है। गिनी घास की खेती भारत वर्ष में कही भी की जा सकती है। गिनी घास की एक विशेषता यह भी है की इसे छायादार स्थान में भी उगाया जाता है अतः उद्यान–चरागाह हेतु यह सबसे उपयुक्त घास की फसल मानी जाती है। गिनी घास के चारे को हरी अवस्था में या फिर साइलेज बनाके या सूखी अवस्था में पशुओं को खिलाया जा सकता है। यह सिंचित दशा में पूरे वर्ष हरा चारा प्रदान करती है जबकि शुष्क दशा में सिर्फ वर्षाकाल में हरा चारा उपलब्ध रहता है।

जलवायु एवं भूमि

गिनी घास गर्म एवं आर्द्र परिस्थितियों की फसल है। गिनी घास 800 से 1200 मिमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों के लिये अत्यन्त उपयुक्त होती है। उपजाऊ एवं गहरी दोमट, मटियार पथरीली एवं कम गहराई वाली मिट्टी इसके लिए उपयुक्त होती है। स्थापित फलों के बागों तथा कृषिवानिकी या वानिकी में वृक्षों के कतारों के बीच छाया में गिनी घास का सफलता पूर्वक लगाया जा सकता है।

खेत की तैयारीः

खेत तैयार करने के लिए एक जुताई मिटटी पलट हल से तथा दो जुताई हैरो से करके पाटा लगा देना चाहिए जिससे की खेत खरपतवार रहित और ढेलामुक्त हो जाये।

बीज दर एवं बुवाई की विधि

गिनी घास की बुवाई बीज द्वारा सीधी बिजाई, बीज से नर्सरी तैयार करके एवं जड़युक्त कल्लों की रोपाई के द्वारा कर सकते हैं। बीज से बुवाई की दशा में 3–4 किलो बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है जबकि जड़युक्त कल्लो से रोपाई करने के लिए 35000–40000 जड़ें एकल सस्यन में तथा 20000–25000 जड़ें अन्तर्सस्यन में आवश्यक होती हैं। इसके अलावा गिनी की नर्सरी भी तैयार कर सकते है। नर्सरी तैयार करने के लिये फरवरी या मार्च में क्यारियाँ बनाकर बीज डाल देना चाहिए। इसके लिये 1 से 1.5 मीटर चौडी क्यारी बनाना चाहिए। एक हेक्टेयर के लिये आठ मीटर लम्बी करीब 15 क्यारियों की आवश्यकता होती है। जबकि सीधे खेत में बुवाई करने के लिये मानसून से पहले बुवाई कर लेनी चाहिए। नर्सरी विधि से बुवाई हेतु 20–25 दिन की पौध से रोपाई करनी चाहिए। गिनी घास की जड़ों या पौध को एकल सस्यन के अंतर्गत 50 सेमी. पौध से पौध तथा 50 सेमी. लाइन से लाइन की दूरी में एवं अन्तर्सस्यन के तहत 120–150 सेमी. लाइन से लाइन की दूरी एवं 50 सेमी. पौध से पौध की दूरी में लगाना चाहिए।

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत किस्में	प्रमुख विशेषताएँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
बुंदेल गिनी–1	अर्ध–शुष्क परिस्थितियों में बेहतर स्थिरता	सम्पूर्ण भारत	650
बुंदेल गिनी–2	देर से फूल आने के कारण अधिक कटाई ली जा सकती है	सम्पूर्ण भारत	650
डीजीजी–1	छाया सहिष्णु इसलिये इसे बागवानी फसलों के बीच में उगाया जा सकता है, और सूखा सहिष्णु	सम्पूर्ण भारत	520
पीजीजी–14	रोमिल पत्तियाँ	उत्तर और मध्य क्षेत्र	480
पीजीजी–616	प्रकाश–असंवेदनशील	उत्तर पश्चिमी, दक्षिणी और पहाड़ी क्षेत्र	494
सीओ–1, ीओ–2, ीओ–3	छाया सहिष्णु, नारियल के बागानो में अंतरफसल के लिए उपयुक्त	तमिलनाडु, केरल और आंध्र प्रदेश का कुछ हिस्सा	535–850
हामिल	खराब जल निकासी वाली मिट्टी के लिए अनुकूलित	केरल, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश के ऊंचे और तटीय रेतीले इलाके	650
पीजीजी–101, पीजीजी–19	प्रकाश–असंवेदनशील, चारे की गुणवत्ता में बेहतर	पंजाब	365–385

खाद एवं उर्वरक:

गिनी घास में पोषक तत्वों का प्रबंधन एकीकृत तरीके से अर्थात जैविक और रासायनिक स्रोतों के समायोजन से करना चाहिए। सर्वप्रथम, खेत में बुवाई के पहले गोबर की सड़ी हुई खाद की 20–25 टन मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देना चाहिए। इसके अलावा गिनी घास को 60 किलो नत्रजन, 50 किलो फॉस्फोरस और 40 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता बुवाई के समय होती है। इसके पश्चात प्रत्येक कटाई के बाद 30–40 किग्रा. नत्रजन का प्रयोग प्रति हे. की दर से करना चाहिए। गिनी घास के बीज और जड़ों को जैव उर्वरकों (एजोस्पिरिलम, एजोटोबैक्टर, बेसिलस, स्यूडोमोनास) से उपचारित करने से गिनी घास की वृद्धि और उपज में काफी बढ़ोत्तरी होती है।

अंतः क्रिया एवं खरपतवार नियंत्रण:

बरसात के मौसम में बुवाई के समय 30 दिन बाद या रोपड़ के 20 दिन बाद खाली जगहों को बीज या जड़ों द्वारा भर देना चाहिए। जमाव पर जड़ो के हरे होने के बाद एक गुड़ाई करके खरपतवार का नियंत्रण कर देना चाहिए।

सिंचाई: सिंचाई उपलब्ध होने पर गर्मी के दिनों में सिंचाई करनी चाहिए। मार्च से जून तक 20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करने से पूरे वर्ष चारा उपलब्ध रहता है। बरसात में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

कटाई एवं उपज:

फसल 60–65 दिन पर पहली कटाई के लिये तैयार हो जाती है। सिंचित दशा में 50 दिन के बाद फसल कटाई के लिये तैयार हो जाती है तथा इस प्रकार लगभग 100 से 150 टन प्रति हे. हरा चारा उपलब्ध होता है। असिंचित दशा मे केवल मानसून पर आधारित खेती से दो या तीन बार कटाई की जाती है जो अगस्त से लेकर दिसम्बर तक प्राप्त होती है। अत: इसको चारा वाले वृक्षों के बीच लगाकर भी चारा उत्पादन किया जाता है।

प्रकाशक:

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/07

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

गिनी घास

संकलनकर्ता:

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

संकर बाजरा नेपियर

वानस्पतिक नामः *पेनीसेटम ग्लौकम × पेनिसेटम परपुरियम*

कुल : पोएसी

संकर बाजरा नेपियर में नेपियर की गहरी जड़ प्रणाली, बहुवर्षीय गुण और तेज वृद्धि के साथ बाजरा की उच्च गुणवत्ता होती है। इसमें 7–10% प्रोटीन एवं 25–30% रेशा पाया जाता है। उत्तम स्वाद, अच्छी गुणवत्ता एवं बहुवर्षीय वर्षपर्यंत चारा उत्पादन हेतु यह सर्वोत्तम फसल है। यह सुपाचक होती है तथा इसका चारा गुणवत्ता पूर्ण होता है। इसकी जड़ों को एक बार रोपण करके, उचित प्रबंधन के द्वारा इस घास से बाजरे जैसा पौष्टिक एवं रसीला चारा प्राप्त होता है, साथ ही यह नेपियर की तरह अधिक कल्ले उत्पादन में सक्षम होने के कारण एक महत्वपूर्ण चारा घास है। अपने इन्हीं गुणों के कारण यह घास किसानों के बीच काफी लोकप्रिय होती जा रही है। संकर बाजरा नेपियर घास को कुट्टी काटकर जानवरों को खिलाया जाता है। इसकी 'हे' तथा 'साइलेज' बनाकर भी पशुओं को खिलायी जा सकती है।

मृदा एवं उसकी तैयारीः

चूँकि संकर बाजरा नेपियर घास शीघ्र बढ़ती है तथा अधिक उत्पादन देती है अतः भूमि से काफी मात्रा में पाषक तत्व अवशोषित करती है। इसीलिए इसके लिए उचित जल निकास, अच्छी उर्वरता वाली दोमट भूमि उपयुक्त होती है। इस घास से एक बार रोपण करके 5–6 वर्षों तक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। अतः इसके लिए एक जुताई मिट्टी पलट हल से तथा उसके दो तीन जुताईयां हैरो/कल्टीवेटर से करके भूमि तैयार कर लेनी चाहिए। उस घास के स्थापित होने के बाद प्रतिवर्ष फावड़े से गुड़ाई करते रहना चाहिए, ताकि खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सके।

खाद एवं उर्वरकः

वैसे तो उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी की जाँच करने के बाद ही करना चाहिए। परन्त सामान्यतः सड़ी हुई प्रति हे. 20–25 टन गोबर की खाद का प्रयोग रोपण से एक माह पूर्व करना चाहिए। रोपाई के समय 30–40 किग्रा. नत्रजन, 50 किग्रा. फास्फोरस तथा 40–50 किग्रा. पोटाश का प्रयोग करना चाहिए। इसके पश्चात प्रत्येक कटाई के बाद 30–40 किग्रा. नत्रजन का प्रयोग प्रति हे. की दर से करना चाहिए।

रोपाई का समय

संकर बाजरा नेपियर घास के बीज में अंकुरण क्षमता नहीं होती है अतः इसकी रोपाई जड़दार कल्लों द्वारा की जाती है। इसकी रोपाई का उपयुक्त समय फरवरी के अंत से लेकर जुलाई–अगस्त माह तक रहता है परन्तु पानी की व्यवस्था होनी चाहिए। यदि सिंचाई के साधन नहीं हैं तो इसकी रोपाई वर्षा प्रारम्भ होने के बाद ही करनी चाहिए। रोपण हेतु जड़ युक्त कल्ले 100×50 सेमी. की दूरी पर प्रयुक्त किये जाते हैं। इस तरह एक हे. के लिए 20000 कल्लों की आवश्यकता पड़ती है। इसके अतिरिक्त इस घास को तने की कलम (स्टेम कटिंग) से भी लगाया जा सकता हैं।

जल प्रबंधन

यदि रोपाई फरवरी के महीने में की गयी हो तो रोपाई के तुरन्त बाद एक सिंचाई तथा 10 दिन के बाद दूसरी सिंचाई करनी चाहिए। गर्मी के दिनों में 10–12 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। प्रत्येक कटाई के बाद फसल में सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन

रोपाई के बाद खरपतवार नियंत्रण हेतु एक–दो निराई गुड़ाई करनी चाहिए अथवा एट्राजिन 0.5 किग्रा. प्रति

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत किस्में	प्रमुख विशेषताएँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
एपीबीएन–1	तनाव के प्रति काफी सहनशील, अत्यधिक पौष्टिक चारा	आंध्र प्रदेश और अन्य दक्षिणी राज्य	2950
बीएनएच–10	नरम, रसीला और अधिक पत्तेदार चारा	उत्तर पश्चिम, उत्तर पूर्व, मध्य और दक्षिणी क्षेत्र	1160
सीओ–1	सूखा सहिष्णु और फोटो–असंवेदनशील, कम पीएच वाली मिटटी के लिए उपयुक्त	तमिलनाडु और दक्षिणी राज्य	3310
सीओ–2, सीओ–3, सीओ–4	उच्च चारा उपज, जल्दी बढ़ने वाली, अत्यधिक स्वादिष्ट	तमिलनाडु	4000–4500
डीएचएन–6	ऑक्सालिक एसिड कम मात्रा	कर्नाटक	1500
पीबीएन–342	पाइरिकुलेरिया लीफ स्पॉट और जड़ सड़न प्रतिरोधी	उत्तर पश्चिम, उत्तर पूर्व और दक्षिणी क्षेत्र	937
बीएनएच–11	नरम और रसदार तना	उत्तर–पश्चिम, मध्य और दक्षिणी क्षेत्र	1220
बीएनएच–14	अधिक रसीला और पतला तना	उत्तर–पश्चिम और दक्षिणी क्षेत्र	1310
सीओ–6	उच्च गुणवत्ता, अधिक सुपाच्य और स्वादिष्ट चारा	उत्तर–पश्चिम और मध्य क्षेत्र	1305
एनबी–21	तेजी से बढ़ने की क्षमता	सम्पूर्ण भारत	1800
सीओ–5	उच्च क्रूड प्रोटीन, भेड़ और बकरियों के लिए अच्छा	सम्पूर्ण भारत	3750

सक्रिय तत्व प्रति हे. की दर से 600–800 लीटर पानी में घोलकर प्रयोग कर सकते हैं। लगातार कटाई करने से धीरे–धीरे शुष्क कल्लों की संख्या बढ़ने लगती है। अतः इन सूखे कल्लों को निकाल देना चाहिए ताकि घास की बढ़वार एवं वृद्धि प्रभावित न हो सके।

कटाई

संकर बाजरा नेपियर घास की पहली कटाई रोपाई के 60 दिन बाद, तत्पश्चात् प्रत्येक कटाई 30–35 दिन बाद करनी चाहिए। अधिक उपज प्राप्त करने हेतु कटाई जमीन से 10–15 सेमी. ऊपर से करना चाहिए। पूरे वर्ष में इस घास की 6–8 कटाई की जा सकती है।

संकर बाजरा नेपियर घास का उत्पादन लागत अर्थशास्त्र

संकर बाजरा नेपियर घास के उत्पादन की मुख्य शस्य क्रियाएं एवं उनमें आने वाली औसत लागत निम्न प्रकार हैः

क्र. स.	शस्य क्रियाएं	औसत लागत (रू/हे.)
1.	खेत की तैयारी	5000
2.	जड़ एवं रोपाई	45000
3.	खाद एवं उर्वरक	8000
4.	सिंचाई प्रबंधन	20000
5.	निराई–गुड़ाई एवं फसल सुरक्षा	8000
6.	कटाई प्रबंधन	24000
	कुल लागत (प्रथम वर्ष)	110000
	कुल लागत (द्वितीय वर्ष एवं उसके बाद)	70000

पुनरूद्वार

कई वर्षों तक लगातार कटाई करते रहने से घास में मृत कल्लों की संख्या बढ़ती रहती है जिससे पौधों की परिधि तो बढती है, लेकिन सजीव कल्लों की संख्या कम ही रहती है। अतः अधिक चारा उत्पादन हेतु कटाई के बाद वर्षा ऋतु से पहले घास को जला दिया जाता है। जलाने से पुराने एवं निर्जीव कल्ले जल जाते हैं, साथ ही हानिकारक कीड़े–मकोड़े भी नष्ट हो जाते हैं। घास को जलाने के बाद खेत की सिचाई अवश्य करनी चाहिए। सिंचाई करने के बाद काफी संख्या में नये कल्ले निकल आते हैं।

उपरोक्त विधि से संकर बाजरा नेपियर घास से अधिकतम हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। चारे के साथ–साथ इन्हीं पौधों से जड़े निकालकर किसान या तो किसी दूसरे खेत में घास रोपित कर सकते हैं या फिर इन्हीं जड़ों को दूसरे किसानों को बेच भी सकते हैं, और अतिरिक्त मुद्रा अर्जित कर सकते हैं।

प्रकाशकः
डॉ. अमरेश चन्द्रा
निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)
0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/04

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

संकर बाजरा नैपियर

संकलनकर्ताः
गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय,
सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील,
बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय,
बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल,
महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी,
अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी,
प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

त्रिसंकर घास

वानस्पतिक नामः *पेनिसेटम ग्लौकम* **×** *पेनिसेटम परपुरियम* **×** *पेनिसेटम स्क्वामुलेटम)*

कुलः पोएसी

त्रिसंकर घास संकर बाजरा नेपियर घास की तरह ही वर्ष पर्यन्त हरा चारा प्रदान करने वाली बहुवर्षीय घास की फसल है जिसमे नेपियर की गहरी जड़ प्रणाली, बहुवर्षीय गुण और तेज वृद्धि के साथ बाजरा की उच्च गुणवत्ता तथा फाउंटेन घास की तरह सूखा रोधी क्षमता होती है। इस प्रकार से यह फसल संकर बाजरा नेपियर की तुलना में अधिक सूखारोधी होती है जो इसको कम पानी की अवस्था में उगाये जाने के लिए आदर्श फसल बनाती है।

पोषकता

त्रिसंकर घास में 7–10% तक प्रोटीन एवं 25–30% तक रेशा पाया जाता है। सूखे क्षेत्रों में दलहनी चारे के साथ मिलाकर पशुओं को खिलाने के लिए यह घास अच्छा विकल्प हो सकती है।

जलवायु एवं मृदा

त्रिसंकर घास शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली आदर्श बहुवर्षीय और सूखारोधी घास है, जिसको अधिक तापमान वाले क्षेत्रों में जहाँ 400 से 900 मिमी. तक वार्षिक वर्षा होती है वहाँ सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। यह एक उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु की फसल है जो कम पानी और ज्यादा तापमान में अच्छे से वृद्धि करती है। यह फसल जलभराव के प्रति संवेदनशील है। अतः ऐसी मृदाएं जो समतल हो और जिनका जल निकास अच्छा हो वह उत्तम मानी जाती हैं। त्रिसंकर घास की खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में कर सकते है लेकिन दोमट मृदा उत्तम मानी जाती है। खेत की तैयारी हेतु मानसून की पहली बारिश के बाद एक जुताई मिट्टी पलट हल से करनी चाहिए फिर 2–3 जुताइयाँ हैरो से करके खेत को समतल करना चाहिए।

रोपाई

त्रिसंकर घास की रोपाई जड़युक्त कल्लों (रूटेड स्लिप्स) के माध्यम से की जाती है। रोपाई का उपयुक्त समय मानसून के दौरान होता है, हालाँकि पानी की उपलब्धता की दशा में मार्च–सितम्बर तक कभी भी रोपाई की जा सकती है। रोपाई हेतु 1–1.5 फुट लम्बे जड़युक्त कल्लों या कलम को 70×70 सेमी. पर 10–15 सेमी. गहरा रोपते है। इस प्रकार से 25–30 हजार जड़ें प्रति हे. पर्याप्त होती हैं। रोपाई के तुरंत बाद पानी जरूर देना चाहिए जिससे जड़ों का जमाव अच्छे से हो जाये।

पोषण प्रबंधन

रोपाई पूर्व 10–15 टन गोबर प्रति हेक्टेयर की खाद खेत की तैयारी के समय मिलाना चाहिए। इसके आलावा 50: 50: 40 किलो नत्रजन : फॉस्फोरस : पोटाश/हे. रोपाई के समय तथा 30 किलो नाइट्रोजन प्रत्येक कटाई उपरान्त मृदा में पर्याप्त नमी की दशा डालना चाहिए।

जल प्रबंधन

हालाँकि त्रिसंकर घास एक सूखारोधी फसल है जो बारानी क्षेत्रों में उगाई जाती है फिर भी इस फसल से सघन एवं वर्ष पर्यन्त चारा उत्पादन हेतु रोपाई के उपरांत प्रथम माह में जड़ों के समुचित जमाव हेतु मृदा में नमी की सुनिश्चितता आवश्यक है। वर्षा नहीं होने की दशा में जीवन रक्षक सिंचाई के रूप में रोपाई उपरांत एवं रोपाई के 7–10 दिन बाद हल्की सिंचाई की जा सकती है जिससे जड़ों का जमाव अच्छे से हो सके। प्रत्येक कटाई उपरांत फसल की तेज पुनर्वृद्धि के लिए भी मृदा में नमी बनाये रखने हेतु हल्की सिंचाई आवश्यक है।

रोग एवं कीट प्रबंधन

त्रिसंकर घास में सूखारोधी गुण के अलावा रोग रोधी क्षमता भी काफी अच्छी होती है, इसलिए इस फसल में सामान्यतः कोई रोग एवं कीटों का प्रकोप नहीं होता है।

कटाई प्रबंधन एवं उपयोग

प्रथम कटाई रोपाई के 50–60 दिन बाद फिर आगे की कटाईयाँ 25–30 दिन के अंतराल में करनी चाहिए। कटाई जमीन की सतह से थोड़ा ऊपर (10–15 सेमी.) से करना चाहिए जिससे कल्लों का पुनः फुटान अच्छे से हो सके। कटाई उपरांत त्रिसंकर घास के चारे को हरी अवस्था में कुट्टी करके अन्य दलहनी चारे के साथ मिलाकर पशुओं को खिला सकते है या साइलेज एवं 'हे' भी बना सकते है।

उत्पादन

उपरोक्त वैज्ञानिक तरीके से फसल के प्रबंधन से वर्ष भर में 6–7 कटाई आसानी से प्राप्त हो जाती है जिनसे 1000–1500 कुंतल हरा चारा प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष प्राप्त हो जाता है।

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666
0510-2730833
director.igfri@icar.gov.in
https://igfri.icar.gov.in
@ icarigfri Jhansi
igfri.jhansi.56
IGFRI Youtube Channel
Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/11

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

त्रिसंकर घास

संकलनकर्ता:

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

दीनानाथ घास

वानस्पतिक नामः *पेनिसेटम पेडिसिलेटम*

कुलः पोएसी

दीनानाथ घास शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों, घास के मैदानों एवं बंजर जगहों में आसानी से उगाई जाने वाली तथा तेज बढ़वार वाली मौसमी/एकवर्षीय घास है। इस फसल में सूखारोधी क्षमता काफी अच्छी होती है। यह फसल कम पानी की उपलब्धता एवं बारानी क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण हरा चारा प्रदान करने हेतु उत्तम फसल है। अदलहनी चारा फसल होने के कारण इसको दलहनी हरे चारे के साथ मिलाकर पशु आहार का संतुलन किया जा सकता है।

जलवायु एवं मृदाः

दीनानाथ घास उष्ण एवं उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु की फसल है जो शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली आदर्श एकवर्षीय और सूखारोधी घास है जिसको अधिक तापमान एवं कम पानी उपलब्धता वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। यह फसल जलभराव के प्रति संवेदनशील है। अतः ऐसी मृदाएं जो समतल हो और जिनका जल निकास अच्छा हो वह उत्तम मानी जाती हैं। दीनानाथ घास की खेती लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में कर सकते है लेकिन दोमट मृदा उत्तम मानी जाती है। मृदा जिसमे जलभराव की समस्या हो वह दीनानाथ फसल की खेती के लिए उपयुक्त नहीं होती है। खेत की तैयारी हेतु मानसून की पहली बारिश के बाद एक जुताई मिट्टी पलट हल से करनी चाहिए फिर 2–3 जुताइयाँ हैरो से करके खेत को समतल करना चाहिए।

बीज एवं बुवाईः

दीनानाथ फसल की बुवाई हेतु छिड़काव विधि से 6–8 किग्रा./हे. बीज की आवश्यकता पड़ती है, जबकि नर्सरी द्वारा पौध तैयार करने के लिए 3 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बुवाई का उचित समय जून–जुलाई माह होता है। सिंचित क्षेत्रों में इसे मार्च–अप्रैल में भी उगा सकते है। बुवाई के लिए कतार से कतार की दूरी 40 सेमी., पौध से पौध की दूरी 15–20 सेमी. व बीज की गहराई 1–1.5 सेमी. होनी चाहिए।

पोषक तत्व प्रबंधनः

पोषक तत्वों के प्रबंधन हेतु 8–10 टन प्रति हेक्टेयर सड़ी गोबर की खाद बुवाई से पूर्व खेत में डालें। इसके अलावा प्रति हेक्टेयर 60–70 किग्रा. नत्रजन एवं 30–40 किलो फॉस्फोरस का भी प्रयोग करें। फॉस्फोरस की पूरी मात्रा बुवाई के समय एवं नत्रजन को दो भागों में बांटकर आधी मात्रा बुवाई/रोपाई के समय शेष रोपाई के 6–7 सप्ताह बाद फसल में डालें। प्रत्येक कटाई उपरांत 25–30 किग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर भी खेत में डालें।

उन्नत प्रजातियाँ

उन्नत किस्में	प्रमुख विशेषताएँ	उपयुक्त क्षेत्र	हरा चारा उपज (क्विंटल प्रति हेक्टेयर)
बुंदेल दीनानाथ–2	जल भराव और सूखे की स्थिति के प्रति सहिष्णु	संपूर्ण भारत	375
बुंदेल–1	सूखा प्रतिरोधी और त्वरित पुनर्वृद्धि	संपूर्ण भारत	345
सीओडी–1	विषैले पदार्थ रहित स्वादिष्ट चारा	तमिलनाडु	675
जवाहर पेनिसेटम–12	अधिक पत्तियों की संख्या	मध्य भारत	520
पूसा दीनानाथ घास	सभी प्रकार की मिट्टी के लिए अनुकूल	पहाड़ी क्षेत्रों को छोड़कर संपूर्ण भारत	685

जल प्रबंधनः

दीनानाथ मुख्य रूप से मानसून के समय उगाई जाती है इसलिए इस फसल को सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है फिर भी मार्च–अप्रैल में उगाई गई फसल में समुचित अंकुरण एवं वृद्धि हेतु वर्षा होने तक प्रत्येक 10–15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

फसल सुरक्षा

यह फसल काफी रोगरोधी है इसलिए इसमें कीट एवं रोग का प्रकोप नहीं होता है।

कटाई

बीज द्वारा बोई गई फसल की कटाई बुवाई के 80–100 दिन बाद करें, जबकि रोपाई की फसल को 65–75 दिन पर कटाई करते है। घास की कटाई भूमि से करीब 10–12 सेमी ऊपर से करनी चाहिए, जिससे पुनर्वृद्धि शीघ्र हो सके।

उपज

इस फसल से प्रति वर्ष औसतन 550– 650 क्विंटल हरा चारा प्रति हे. प्राप्त किया जा सकता है।

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/08

भाकृअनुप ICAR

भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

दीनानाथ घास

संकलनकर्ताः

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

वर्ष पर्यन्त हरा चारा उपलब्धता हेतु सघन चारा उत्पादन प्रणाली

उत्तम गुणवत्ता के पशु आहार हेतु यह माना जाता है कि दलहनी एवं अदलहनी चारे की संतुलित मात्रा वर्ष पर्यन्त उपलब्ध हो। इसीलिए यह सलाह दी जाती है कि दो या अधिक प्रकार की चारा फसलों को उगाया जाए जिनसे वर्ष पर्यन्त दलहनी एवं अदलहनी चारे की संतुलित मात्रा उपलब्ध होती रहे। वर्षा की उपलब्धता के अनुसार विभिन्न प्रकार के चारे के उत्पादन मॉडल को चारे की फसलों की विविधता के आधार पर विकसित किया गया है जिनका विवरण निम्न प्रकार हैं:

1. **बहुवर्षीय घास आधारित सघन चारा उत्पादन तकनीकें**

संकर बाजरा नेपियर घास/गिनी घास+ (लोबिया/ग्वार- बरसीम/रिजका): सिंचित स्थिति

यह फसल प्रणाली उत्तरी भारत, उत्तरी पूर्वी एवं मध्य भारत के लिये संस्तुत की गई है। शहरों के नजदीक दुग्ध उत्पादकों के लिये इस प्रणाली द्वारा वर्ष पर्यन्त हरे चारे की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है। इस प्रणाली में मौसमी दलहनी चारा फसलों (लोबिया/ग्वार/बरसीम/रिजका) को बारहमासी घासों (संकर बाजरा नेपियर घास/गिनी घास) के साथ अंतर सस्यन पद्धति में उगाते हैं। इस प्रणाली की स्थापना हेतु खेत की तैयारी के बाद बारहमासी संकर बाजरा नेपियर घास/गिनी घास को 3.0 मीटर की पंक्ति से पंक्ति की दूरी और 70 सेमी. की पौधें से पौधें की दूरी पर लगाना चाहिए। मौसमी चारा हेतु लोबिया/ग्वार (खरीफ/ग्रीष्म) और बरसीम/लुसर्न (रबी) को उगाया जाता है। बारहमासी घासों के रोपण हेतु दो– तीन गाँठ वाले जड़ युक्त कल्ले या कटिंग को थोड़ी तिरछी अवस्था (45 डिग्री कोण) में जायद या मानसून के दौरान रोपित किया जाता है। गिनी घास की बीज द्वारा भी बुवाई कर सकते हैं जिसमे 4–5 किलो बीज प्रति हेक्टेयर की दर से इस्तेमाल करते हैं। पोषक तत्व प्रबंधन के लिए, अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद की 8–10 टन प्रति हेक्टेयर मात्रा को खेत की तैयारी से पहले अच्छी तरह मिट्टी में मिला देना चाहिए। इसके अलावा जड़ युक्त कल्लों और चारा बीज का उपचार एजोटोबैक्टर (घास), राइजोबियम (दलहन) और फॉस्फोरस और पोटैशियम घोलक बैक्टीरिया (घास और दलहन दोनों) जैव–उर्वरकों के कल्चर के साथ करना चाहिए। रासायनिक उर्वरकों को 60:40:30 किलो (घास) और 20:40:30 किलो (दलहन) नत्रजनः फॉस्फोरसः पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के समय तथा 30 किलोग्राम नत्रजन प्रति हेक्टेयर को घास की प्रत्येक कटाई के बाद डालना संस्तुत किया गया है। दोनों घटक फसलों के लिए सालाना लगभग 1100 मिमी. पानी की आवश्यकता होती है। दोनों फसलों में उचित नमी बनाए रखने के लिए औसतन 15–20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की जाती है। इस प्रकार से घास की फसल रोपण के 60–70 दिनों के बाद पहली कटाई हेतु तैयार हो जाती है तथा उसके बाद की कटाइयाँ 30–40 दिन के अंतराल पर की जाती है। दलहनी चारे की कटाई बुवाई के 45–50 दिनों के बाद की जाती है। इस प्रकार से (संकर बाजरा नेपियर घास/गिनी घास) + (लोबिया/ग्वार–बरसीम/रिजका) प्रणाली को अपनाने से लगभग 100–120 टन प्रति हेक्टेयर हरा चारा 25:75 के दलहनी एवं अदलहनी चारे के अनुपात में प्राप्त किया जा सकता है जो 12–15 वयस्क मवेशियों को वर्ष पर्यन्त हरा चारा प्रदान करने हेतु पर्याप्त होता है। इस पद्धति के आर्थिक आंकलन के अनुसार, प्रति कुंतल हरा चारा उत्पादन में 29 रु. की लागत में 2.41 का लाभःलागत अनुपात के हिसाब से 193000 रु. प्रति हेक्टेयर का शुद्ध लाभ प्राप्त होता है।

त्रिसंकर घास + सेसबेनिया + (ज्वार+ लोबिया–जौ) पद्धतिः असिंचित स्थिति

इस प्रकार की चारा पद्धति के अंतर्गत त्रिसंकर घास और सेसबेनिया को पट्टियों में तथा मौसमी फसलों जैसे कि ज्वार, चारा लोबिया और जौ को दो पट्टियों के बीच की लगभग 2.2 मीटर जगह में लगाते हैं। पट्टियों में ज्वार और लोबिया को इस प्रकार लगाते हैं की दो लाइनें ज्वार की 30 सेमी. की दूरी पर हों फिर एक लाइन लोबिया की 30 सेमी. की दूरी पर हो। एक पट्टी में त्रिसंकर घास की दो लाइनों को एक मीटर की लाइन से लाइन दूरी में तथा पौध से पौध की दूरी 75 सेमी. रखकर लगाते हैं। सेसबेनिया को त्रिसंकर घास की दो पंक्तियों के बीच में 75 सेमी. की दूरी में लगाते हैं। इस प्रकार से पट्टियों पर चारा की खेती करने से चारा उत्पादन के अलावा मिट्टी और पानी की बचत और संरक्षण भी होता है और एकत्रित पानी को खेत में ही बने तालाब में संरक्षित करके रबी के मौसम में सिंचाई हेतु प्रयोग में लिया जा सकता है। इस पद्धति से 78.5 टन/हे. तक हरा चारा के साथ साथ 2.0 टन/हे. जौ के अनाज का उत्पादन भी हो जाता है। इस प्रकार से इस पद्धति द्वारा 8–9 पशुओं की चारा आवश्यकता को पूरा किया जा सकता है। इस पद्धति के आर्थिक आंकलन के अनुसार प्रति कुंतल हरा चारा उत्पादन में लगभग 38 रु. का खर्च आता है और इस पद्धति में 1.98 लाभःलागत अनुपात के हिसाब से लगभग 75000 का शुद्ध लाभ भी प्राप्त हो जाता है।

2. मौसमी फसल आधारित सघन चारा उत्पादन तकनीकें

जिन किसानों के पास भूमि की स्थाई व्यवस्था न हो या वो चारे के लिये एक भूमि को 3–4 वर्ष के लिये आवंटन करने में असमर्थ हो वो किसान मौसमी चारा फसलों का चयन करके वर्ष पर्यन्त हरे चारे की उपलब्धता सुनिश्चित कर सकते हैं। सिंचित एवं असिंचित क्षेत्रों के लिये यह दो प्रकार के होते हैं।

ज्वार (बहुकटाई) + लोबिया –बरसीम + जापानीज सरसों–मक्का + लोबियाः सिंचित क्षेत्र

इस प्रणाली को सिंचित क्षेत्रों के लिये संस्तुत किया गया है। इसमें बहुकटाई ज्वार + लोबिया की फसल को जून–जुलाई में बुवाई करके शुरू किया जाता है तथा बहुकटाई ज्वार की अंतिम कटाई सितम्बर अंत तक की जाती है। रबी ऋतु में बरसीम + जापानीज सरसों की बुवाई अक्टूबर में करके अप्रैल प्रथम सप्ताह तक हरा चारा प्राप्त किया जाता है। मक्का + लोबिया को अप्रैल में बुवाई करके ग्रीष्म ऋतु में हरे चारे की उपलब्धता सुनिश्चित की जाती है। इस प्रणाली से लगभग 197 टन/हे./वर्ष हरे चारे की उपज प्राप्त होती है। इस प्रणाली से लगभग 67 प्रतिशत अदलहनी तथा 33 प्रतिशत दलहनी चारा उपज प्राप्त होती है जो वर्षभर 5–6 पशुओं की चारे की आवश्यकता को पूर्ण करती है।

सुबबूल + टी.एस.एच. –(ज्वार + अरहर): असिंचित क्षेत्र

इस प्रणाली को ऐसे क्षेत्रों में लगाया जाता है जिन क्षेत्रों में सिंचाई के साधनों की कमी होती है। इस सघन फसल प्रणाली में चारे की कमी वाले दिनों में सुबबूल के द्वारा हरे चारे की उपलब्धता सुनिश्चित की जाती है। मुख्य खरीफ ऋतु में सुबबूल तथा टी.एस.एच. के साथ–साथ ज्वार से भरपूर हरा चारा उपलब्ध होता है। इस प्रणाली से दलहन के रूप में अरहर से लगभग 4 क्विंटल दाने की पैदावार भी मिलती है। इस पद्धति से वर्षपर्यन्त 533 क्विंटल/हे. की दर से हरे चारे की उपज प्राप्त होती है जिससे 2–3 पशुओं को चारे की उपलब्धता सुनिश्चित की जा सकती है।

प्रकाशकः
डॉ. अमरेश चन्द्रा
निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)
0510-2730666
0510-2730833
director.igfri@icar.gov.in
https://igfri.icar.gov.in
@ icarigfri Jhansi
igfri.jhansi.56
IGFRI Youtube Channel
Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/19

भाकृअनुप ICAR | MILLETS 2023 | G20 | भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

वर्ष पर्यन्त हरा चारा उपलब्धता हेतु सघन चारा उत्पादन प्रणाली

संकलनकर्ताः
गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

चारा चुकंदर

वानस्पतिक नामः *बीटा वल्गारिस*

कुलः अमरेंथेसी

चारा चुकंदर एक द्विवर्षीय जमीकन्दीय फसल है जिसको शुष्क और अर्धशुष्क जलवायु के कम पानी उपलब्धता वाले क्षेत्रों में उगाया जा सकता है और अप्रैल–मई के माह तक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। इसके पौधे का उपयोगी भाग मुख्य रूप से जड़ होती है हालाँकि चुकंदर की पत्तियों को भी हरे चारे के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

पोषकता

चुकंदर का पूरा पौधा गुणवत्ता और पोषकता से भरपूर होता है क्योंकि इसमें 12–17 प्रतिशत शुष्क पदार्थ तथा शुष्क भार के आधार पर औसतन 8 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 0–5 प्रतिशत वसा, 6 प्रतिशत क्रूड रेशा के अलावा खनिज तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

उत्पादन तकनीक

जलवायु एवं मृदा

चुकंदर की खेती शुष्क और अर्ध शुष्क जलवायु में बलुई और बलुई–दोमट मृदा में जिसका पी.एच. मान 6–8 के बीच हो वह उपयुक्त होती है। चुकंदर की फसल हल्की क्षारीय मृदा एवं खारे पानी की स्थिति में भी आसानी से की जा सकती है।

खेत की तैयारी

चुकंदर के लिए खेत की तैयारी हेतु सर्वप्रथम एक जुताई मिट्टी पलट हल से फिर 1–2 जुताई हैरो से करनी चाहिए। खेत में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा संतुलित रखने और फसल में पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु जुताई पूर्व गोबर की सड़ी हुई खाद (10–15 टन/हे.) का प्रयोग करना चाहिए।

प्रजातियाँ

चारा चुकंदर हेतु मुख्य प्रजातियाँ जामोन, मोनेरो, जे. के. कुबेर, स्प्लेंडिड, आई.आई.एस.आर. कंपोजिट–1, जेरोनिमो इत्यादि हैं।

बीज एवं बुवाई

चारा चुकंदर की बुवाई का उपयुक्त समय अक्टूबर–नवंबर होता है। चारा चुकंदर की खेती हेतु प्रति हेक्टेयर 2 से 2.5 किलो बीज पर्याप्त होता है। चारा चुकंदर की अच्छी फसल हेतु एक हैक्टयर में एक लाख पौधे होने चाहिए। बीज को मैन्कोजेब व थिरम 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करके ही बुवाई करना चाहिए तथा बुवाई करने के तुरंत बाद सिंचाई करना चाहिए। चारा चुकंदर की बुवाई मेड़–नाली विधि से मेड़ों पर करें। मेड की दूरी आपस में 70 सेमी. रखें एवं मेड की ऊँचाई 20 सेमी. तक रखें। मेड पर बीज की बुवाई 20–25 सेमी. बीज से बीज की दूरी रखते हुए 2 से 2.5 सेमी. गहराई पर करें। चुकंदर की चारा वाली प्रजातियाँ कई अंकुर वाली होती हैं अतः बुवाई के 25–30 दिन बाद अनावश्यक पौध को निकाल के विरलीकरण करके एक जगह पर एक पौधा ही रखना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

चारा चुकंदर की अधिक उत्पादन क्षमता होने के कारण भूमि से अधिक मात्रा में पोषक तत्वों का अवशोषण होता है। इसलिए खेत में हर तीसरे वर्ष खेत की तैयारी के समय 15–20 टन प्रति हैक्टयर अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद डालें तथा फसल को 100 किलो नत्रजन, 75 किलो फास्फोरस व 75 किलो पोटाश प्रति हैक्टयर की दर से उर्वरक देना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा, फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय देना चाहिए और नत्रजन की बची हुई आधी मात्रा दो बराबर हिस्सों में बुवाई के 30 व 50 दिन पर निराई के पश्चात् देना चाहिए।

जल प्रबंधन

चारा चुकंदर की कुल जल माँग 80–100 सेमी. होती है। प्रथम सिंचाई बुवाई के तुरंत बाद व तदुपरांत आवश्यकतानुसार 10–12 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें।

खरपतवार नियंत्रण एवं पादप सुरक्षा

चारा चुकंदर में खरपतवार नियंत्रण हेतु बुवाई के 20–25 दिन बाद एवं 40–45 दिन बाद निराई–गुड़ाई करें तथा मेड़ों पर मिट्टी चढ़ायें। चारा चुकंदर में किसी खास रोग एवं कीट की समस्या नहीं होती है हालाँकि मृदा जनित कीटों से कंदों को बचने के लिए क्यूनॉलफॉस (1.5 प्रतिशत) को 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की तैयारी के समय मिट्टी में मिलाएं। जड़ गलन रोग की रोकथाम हेतु ट्राईकोडर्मा विरडी 1. 25 ग्राम या मैन्कोजेब कवकनाशी 2 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए। पत्ते खाने वाले कीड़ों से फसल को बचाने के लिए 5 प्रतिशत नीम के बीजों की खली के घोल का छिड़काव करना भी फायदेमंद होता है।

खुदाई एवं उपज

चारा चुकंदर के कंदों की खुदाई से 1 से 1.5 महीना पहले पत्तियों को जमीन सं 2–3 इंच ऊपर से काटकर पशुओं को चारे के रूप में खिलाना चाहिए। इसके पश्चात् फसल को सिंचाई के समय 25 किलो प्रति हैक्टेयर नत्रजन दें जिससे फसल तेजी से बढ़ेगी। जब नीचे की पत्तियाँ सूखने लग जाएँ व अन्य पीली पड़ने लग जाएँ तब इसके कंदों को खोद लें। आम तौर पर

यह फसल 120 दिन में तैयार हो जाती है किन्तु इसकी जड़ें जमीन में खराब नहीं होती इसलिए खुदाई में जल्दीबाजी न करें व रोजाना आवश्यकतानुसार कंदों को निकलकर पशुओं को खिलाते रहें। खुदाई के वक्त ध्यान रहे कि कंदों की बाहरी परत को नुकसान न पहुंचे। अच्छे प्रबंधन द्वारा एक हेक्टेयर से लगभग 80 टन हरा चारा कंद प्राप्त किया जा सकता है।

उपयोग विधि

तोड़ी गई पत्तियों और खुदाई किये हुए कन्दों को धो कर साफ करके छोटे–छोटे टुकड़ों (3–5 सेंटीमीटर) में काटकर सीधे ही जानवरों को खिला सकते हैं। चारा चुकंदर को अकेले एवं अधिक मात्रा में खिलाने से पशु में आफरा की समस्या आ सकती है इसलिए चारा चुकंदर को अन्य चारे और भूसे इत्यादि के साथ मिलकर ही खिलाएं। एक पूर्ण व्यस्क डेरी वाले पशु को धीरे–धीरे मात्रा बढ़ाते हुए 10–15 किलोग्राम (कन्द) प्रतिदिन के हिसाब से खिलाएं भेड़–बकड़ी के लिए 4–7 किलोग्राम प्रति पशु उपयुक्त है। जिन दिनों पशुओं को चुकंदर खिला रहे हैं उन दिनों इन्हें दिए जाने वाले बांटे की मात्रा आधी तक कम की जा सकती है। कंद को काटकर धूप में सुखाकर भंडारित भी किया जा सकता है।

प्रकाशक:

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666
0510-2730833
director.igfri@icar.gov.in
https://igfri.icar.gov.in
@ icarigfri Jhansi
igfri.jhansi.56
IGFRI Youtube Channel
Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/14

भाकृअनुप ICAR | MILLETS 2023 | G20 | भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

चुकंदर

संकलनकर्ता:

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

खेसारी

वानस्पतिक नामः *लेथाइरस सेटाइवस*

कुलः लेग्यूमिनेसी

खेसारी शरद ऋतु में उगाई जाने वाली एकवर्षीय दलहनी फसल है, जिसकी दाल तथा फलियाँ खाने योग्य होती हैं। भारत में यह खाद्य एवं चारे की एक लघु फसल है। इसको अधिक गर्मी की आवश्यकता होती है, साथ ही साथ यह ठंड प्रतिरोधी भी होती है। खेसारी आर्द्र परिस्थितियों में अच्छा प्रदर्शन करती है एवं सूखे और उच्च तापमान के लिए प्रतिरोधी भी होती है। इसके दाने पशु आहार के लिए दिए जाते हैं। इसे एकल फसल अथवा अंतर–फसल और मिश्रित–फसल प्रणाली में जई, सरसों, अलसी या जौ के साथ उगाया जाता है। रिले या उतेरा प्रणाली जो की भारत के धान आधारित कृषि क्षेत्रों में सबसे प्रचलित कार्य प्रणाली है, में किसान अपनी फसल की कटाई से 15–20 दिनों पहले धान की खड़ी फसल में खेसारी के बीज का छिड़काव करते है। खेसारी एक फलीदार फसल होने के कारण वायुमंडलीय नाइट्रोजन को भी स्थिर करती है, तथा मिट्टी में कार्बन और कार्बनिक पदार्थ में सुधार भी करती है। इस प्रकार खेसारी सामूहिक रूप से मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार कर टिकाऊ उत्पादन प्रणाली हेतु आधार भी प्रदान करती है। खेसारी के हरे चारे से हे बनाया जाता है, जिसे बाद में पशुओं को खिलाया जाता है जब हरे चारे की उपलब्धता नहीं होती है।

जलवायु एवं भूमि

इसे बलुई दोमट या चिकनी दोमट मिट्टी में उगाया जाता है। इसके बेहतर विकास के लिए इष्टतम पी. एच. 6.5 से 7.0 मानी जाता है। जहाँ औसत तापमान 10 से 25 डिग्री सेल्सियस होता है और औसत वर्षा 400–650 मिमी. प्रति वर्ष होती है वहाँ खेसारी की वृद्धि अच्छी होती है।

खेत की तैयारी

सामान्य रूप से दो से तीन बार अच्छी प्रकार से जुताई कर खेत को तैयार कर लेना चाहिए, जिससे खेत की मिट्टी भुरभुरी बन जाये और चारे की अधिक उपज प्राप्त हो सके।

किस्में

निर्मल किस्म चारे के लिए देश के पूर्वी प्रदेशों में काफी प्रचलित है।

बुवाई का समय, बीज दर एवं बुवाई का तरीका

इसकी बुआई का सही समय 15 अक्टूबर से 15 नवंबर है। उतेरा प्रणाली में खेसारी की बुआई धान की फसल की कटाई से 15–20 दिनों पहले ही कर दी जाती है। बुआई के समय कतार से कतार की दूरी 30 सेंटीमीटर और पौधे से पौधे की दूरी 10 सेंटीमीटर रखना चाहिए। एक हेक्टेयर चारा उत्पादन में 50 किलोग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है, लेकिन उतेरा प्रणाली में सामान्य से 25 प्रतिशत ज्यादा बीज दर रखने की सलाह दी जाती है। बीज जनित रोगों से बचाने के लिए बीज को बुआई के एक दिन पहले थीरम, कैप्टान या कार्बेन्डाजिम से उपचारित कर लेना चाहिए, जिससे बढ़िया अंकुरण हो सके और अधिक उपज प्राप्त हो सके।

फसल प्रणाली

कुछ महत्वपूर्ण खेसारी आधारित फसल प्रणालियाँ निम्नलिखित हैं –

ज्वार – खेसारी+सरसों

ज्वार – जई+खेसारी

धान – खेसारी

पोषक तत्व प्रबंधन

खेसारी में नाइट्रोजन स्थिरीकरण की क्षमता होती हैं, इसलिए यह कम उपजाऊ भूमि तथा मिश्रित फसल प्रणालियों के लिए एक महत्वपूर्ण फसल है। अच्छे उत्पादन के लिए खेत की अंतिम जुताई के समय प्रति हेक्टेयर नत्रजनः फास्फोरसः पोटाश का प्रयोग 20: 50: 30 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से करना चाहिए। गुणवत्तायुक्त गोबर की खाद / हरी खाद का प्रयोग (5 टन / हेक्टेयर) जैविक घटक के रूप में किया जाना चाहिए।

जल प्रबंधन

इसमें सामान्य तौर पर सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती है, लेकिन खेत में नमी की कमी हो, तो 60 से 70 दिनों बाद एक सिंचाई कर देना चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन

प्रारंभ में एक या दो बार निराई–गुड़ाई करने से खरपतवार निकल जाते हैं और पौधों की बढ़ोत्तरी अच्छी होती है। इसके बाद पौधों की तीव्र वृद्धि होती है जो खरपतवारों को दोबारा पनपने नहीं देते हैं।

रोग एवं कीट प्रबंधन

इसमें रोग या कीट गंभीर नुकसान नहीं करते हैं, हालाँकि जरुरत पड़ने पर उपयुक्त रोगनाशी अथवा कीटनाशी का छिड़काव करना चाहिए। मृदुरोमिल आसिता के लिए कार्बेन्डाजिम कवकनाशी से बीजोपचार करनी चाहिए।

कटाई–प्रबन्धन एवं उपज

अच्छी गुणवत्ता वाले चारे के लिए फसल को 50 प्रतिशत फूल आने पर (बुआई के 65–70 दिन बाद) काटा जाना चाहिए। उन्नत तकनीक का प्रयोग कर, खेसारी से 20–25 टन प्रति हेक्टेयर हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666
0510-2730833
director.igfri@icar.gov.in
https://igfri.icar.gov.in
@ icarigfri Jhansi
igfri.jhansi.56
IGFRI Youtube Channel
Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/15

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

खेसारी

संकलनकर्ताः

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

अजोला

भारत में पशुओं के लिए हरे चारे की उपलब्धता में निरंतर कमी परिलक्षित हो रही है। कृषि के आधुनिकीकरण की वजह से फसल प्रति–उत्पाद (भूसा, कड़वी, पैरा कुट्टी आदि) में भी कमी आ रही है जोकि अन्यथा पशु आहार के रूप में उपयोग किया जाता रहा है। हमारे देश में पशुधन हेतु वर्ष पर्यन्त पौष्टिक हरा चारा उपलब्ध कराना एक बहुत बड़ी चुनौती है। ऐसी दशा में संतुलित पोषण की अनुपलब्धता के कारण पशुधन का दुग्ध उत्पादन भी कम होता है और वे विभिन्न प्रकार के रोग एवं व्याधियों से भी ग्रसित रहते हैं। इसीलिए यह अत्यंत आवश्यक हो जाता है की पशुओं हेतु प्रचलित चारे के अलावा कुछ अन्य वैकल्पित स्रोतों जैसे की अजोला इत्यादि से भी पोषक चारे की उपलब्धता सुनिश्चित की जा, जिससे की चारे की कमी की दशा में उच्च गुणवत्ता का चारा पशुओं को मिलता रहे और हमारा पशुधन स्वस्थ और दुधारू बन सकें।

परिचय

अजोला। मशीतोष्ण जलवायु में पाया जाने वाला जलीय फर्न है जो पानी की सतह पर छोटे छोटे ।मूह में सघन हरी चटाई के रूप में पनपती है। भारत में मुख्य रूप से अजोला की प्रजाति अजोला पिन्नाटा पाई जाती है जो गर्मी को सहन करने वाली प्रजाति है और इसकी पत्तियों में नील हरित काई नामक सूक्ष्म जीव पाया जाता है जो वायुमंडल की मुक्त नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करता है जो इसको प्रोटीनयुक्त, पोषक एवं सुपाच्य बनाता है। कम लागत, शीघ्र बढ़वार और पोषक गुण के कारण अजोला वर्तमान में एक बहुउपयोगी एवं आदर्श पोषक चारा के रूप में उभर रहा है जिसका उपयोग दुधारू पशुओं, मछलियों, मोतियों, मुर्गियों इत्यादि को खिलाने में किया जाता है साथ ही इसको धान के खेत में हरी खाद के रूप में भी इस्तेमाल कर सकते हैं।

अजोला के गुण

अजोला में प्रोटीन, आवश्यक अमीनो अम्ल, विटामिन्स

(विटामिन ए, विटामिन बी–12 तथा बीटा–कैरोटीन) एवं खनिज तत्त्व जैसे कैल्शियम, फास्फोरस, पोटेशियम, आयरन, कॉपर, मैग्नीशियम आदि प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। इसमें शुष्क मात्रा के आधार पर 20–30 प्रतिशत प्रोटीन, 10–15 प्रतिशत खनिज एवं 7–10 प्रतिशत अमीनो अम्ल आदि पाये जाते है। इसकी संरचना इसे अत्यंत पौष्टिक एवं असरकारक आदर्श पशु आहार बनाती है इसीलिए इसको हरा ाोना, प्रोटीनप्राश एवं च्यवनप्राश इत्यादि की संज्ञा भी दी जाती है। दुधारू पशुओं को प्रतिदिन 1–1–5 किलो अजोला खिलाने से उनके दूध में 10–15 प्रतिशत कि वृद्धि होती है और उनका स्वास्थ्य भी उत्तम रहता है।

अजोला की खेती

अजोला चारा उगाने के लिए किसी विशेषज्ञता की जरूरत नहीं होती है और किसान अजोला को खुद ही आसानी से उगा सकते हैं। इसको तालाब, हौदी या फिर गड्ढे में पानी भरकर उगाया जा सकता है। हौदी व गड्ढे कि चौड़ाई लगभग 1–5 –2–0 मीटर, गहराई लगभग 1–0 फुट और लम्बाई जगह की उपलब्धता के अनुसार रख सकते हैं। अगर गड्ढा कच्चा हो तो उसमें पॉलिथीन बिछा दें ताकि पानी का ठहराव बना रहे। अब गड्ढे में 2–3 किलो प्रति वर्ग मीटर की दर से मिट्टी और 1–0 किलो प्रति वर्ग मीटर कि दर से ताजा गोबर फैला दें। फिर गड्ढे में 15–20 सेमी. तक पानी भर दें और उसमें 100–150 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से अजोला का कल्चर डाल दें। फॉस्फोरस कि पूर्ति के लिए 5–0 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से सिंगल सुपर फॉस्फेट भी डाल देनी चाहिए। अजोला की वृद्धि के लिए उपयुक्त तापमान 20 –35 डिग्री सेल्सियस होता है इसलिए इसको तीव्र धूप और तापमान से बचाने के लिए थोड़ा छाया कि व्यवस्था एवं अधिक ठण्ड एवं पाला से बचाने के लिए रात्रि के समय पॉलिथीन शीट या टाट–बोरी इत्यादि से ढक देना चाहिए। इस प्रकार से अजोला के प्रबंधन से यह 10–15 दिन में निकालने योग्य हो जाती है। इसकी तुड़ाई करते समय थोड़ी अजोला (लगभग 5 प्रतिशत) को गड्ढे में कल्चर के रूप में छोड़ देना चाहिए और फॉस्फोरस डाल देना चाहिए ताकि वह फिर से वृद्धि कर सके। प्रत्येक तुड़ाई के बाद 20 –30 प्रतिशत पानी बदल दें एवं 3 महीने में एक बार गड्ढे की पूर्ण ।फाई करनी चाहिए और जो अपशिष्ट एवं पोषक तत्त्व युक्त पानी निकलता है उसको अन्य फसलों में सिंचाई के रूप में इस्तेमाल कर लेना चाहिए।

अजोला की उपयोगिता एवं लाभ

- अजोला में 20–30 प्रतिशत तक प्रोटीन और 10–15 प्रतिशत तक खनिज पोषक तत्त्व पाए जाते है। इसको नियमित रूप से अन्य चारे के साथ खिलाने से पशु पोषण संतुलित रहता है और वह स्वस्थ और दुधारू बनता है। इसमें ज्वार, बाजरा, मक्का और संकर बाजरा नेपियर की तुलना में 4.4.5 गुना एवं बरसीम, लोबिआ की तुलना में 2.2.5 गुना तक प्रोटीन एवं पोषक तत्त्व पाए जाते हैं। विटामिन्स एवं खनिज तत्वों की प्रचुरता के कारण ऐसा भी पाया गया है की अजोला के प्रयोग से पशुओं में रतौंधी एवं अन्य बीमारियां भी कम आती हैं।
- अजोला की खेती कम लागत में अधिक चारा उत्पादन देने वाली तकनीक है जिसे भूमिहीन एवं ीमान्त कृषक भी बहुत आसानी से अपना सकते है क्योंकि इसकी खेती करना बहुत ही आसान और सस्ती है।
- इसकी वृद्धि बहुत तेज होती है जिसके कारण 3–5 दिन में ही इसकी बढ़वार दोगुनी हो जाती है। इस प्रकार से इसकी 8–10 दिन में तुड़ाई करने पर 1.1.5 किलोग्राम अजोला प्रति वर्ग मीटर से प्राप्त हो जाता है।
- वायुमंडलीय नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता के कारण अजोला को एक उत्तम जैविक एवं हरी खाद के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है।
- अजोला खिलाने से पशुओं में बांझपन की शिकायत में भी कमी आती है और इसमें फॉस्फोरस प्रचुर मात्रा में होने के कारण पशुमूत्र में खून आने की समस्या से भी निजात मिलती है।

प्रकाशकः
डॉ. अमरेश चन्द्रा
निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)
0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/16

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

अजोला

संकलनकर्ता:
गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय,
सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील,
बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय,
बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल,
महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी,
अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी,
प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

सहजन

वानस्पतिक नामः *मोरिंगा ओलिफेरा*

कुलः मोरिंगेसी

सहजन एक बहुवर्षीय, शीघ्र बढ़ने वाला पतझड़ी एवं बहुउद्देशीय पेड़ है। इसे ड्रमस्टिक और आम भाषा में मोरिंगा, सेंजन, मुनगा या सहजन आदि नामों से जाना जाता है। सहजन का उपयोग पशुओं की खिलाई में हरे चारे, हे और साइलेज के रूप में किया जा सकता हैं। खासकर देश के शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्रों में सहजन का उत्पादन कर इसे हरे चारे के रूप मे सम्मलित कर पशु पोषण में उपयोग किया जा सकता है। सहजन के हरे चारे में 16 से 22 प्रतिशत शुष्क पदार्थ, 15 से 20 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 35 से 56 प्रतिशत क्रूड फाइबर एवं 7 से 10 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट होते हैं। इसके अलावा सहजन में विभिन्न खनिज भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

जलवायु एवं मृदा :

सहजन एक ऊष्ण जलवायु का पेड़ है जो 25–35° सेल्सियस तापक्रम वाले क्षेत्रों में अच्छी तरह उगाया जा सकता है लेकिन यह 40–45° सेल्सियस के तापमान तक जीवित रहता है। सूखा रोधी पेड़ सहजन जहाँ वार्षिक बारिश 250–1500 मिमी– होती है वहाँ उगता है। सहजन की वृद्धि बलुई दोमट और दोमट मिट्टी में अच्छी होती है। सहजन जलभराव के प्रति संवेदनशील है इसलिए सहजन के खेत में जलनिकासी की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। खेत तैयार करने के लिए एक जुताई मिटटी पलट हल से फिर दो जुताई हैरो से करके पाटा लगा देना चाहिए जिससे की खेत खरपतवार रहित और ढेलामुक्त हो जाये।

प्रजातियाँ

पीकेएम–1, पीकेएम–2, भाग्य, धनराज, कोंकण रुचिरा, जी.के.वी.के.– 1, 2 एवं 3

प्रसारण एवं रोपण :

सहजन में बीज और शाखा के कलम दोनों से ही प्रवर्धन होता है। अच्छी फलन और वर्ष में दो बार फलत के लिए बीज से प्रवर्धन करना अच्छा है। एक हेक्टेयर में खेती करने के लिए 500 ग्राम बीज पर्याप्त होता हैं। बीज को सीधे तैयार गड्ढों में या फिर पॉलीथीन बैग में तैयार कर गड्ढों में लगाया जा सकता है। पॉलीथीन बैग में पौध एक महीने में लगाने योग्य तैयार हो जाती है। इसके बीज को सीधे बोया जा सकता है क्योंकि इसका अंकुरण 80–90 प्रतिशत तक रहता है। लकड़ी की सख्त कटिंग जिसकी लम्बाई 1–5 फीट तक हो, से भी इसका रोपण किया जा सकता है। इन कटिंग को छाया में तीन दिन तक सुखाना चाहिए। एक मीटर लम्बी कटिंग जिनका व्यास कम से कम 4 सेमी. हो, को भी रोपित किया जा सकता है। सहजन की बुवाई 30 से 50 सेमी. लाइन से लाइन और पौध से पौध की दूरी पर करना चाहिए। एक हेक्टेयर की बुवाई हेतु 35–40 किलो बीज पर्याप्त होता है। सहजन को कवकजनित रोगों से बचाने के लिए बीज को बुवाई से पूर्व कार्बेन्डाजिम (10 ग्राम प्रति किलो बीज) से उपचारित करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

सहजन में पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु 8–10 टन/हे गोबर की सड़ी हुई खाद को बुवाई से 15 दिन पूर्व खेत में मिलाना चाहिए। इसके अलावा 150 किलो नत्रजन, 60 किलो फॉस्फोरस, 30 किलो पोटाश और 10 किलो जिंक देना चाहिए। नत्रजन की 30 किलो मात्रा और

फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय देना चाहिए। बची हुई नत्रजन की बराबर बराबर मात्रा को बुवाई के 45 दिन बाद फिर प्रत्येक कटाई के 15 दिन बाद देना चाहिए।

खरपतवार प्रबंधन

सहजन में खरपतवारों की रोकथाम के लिए पेंडीमेथलीन खरपतवारनाशी की 1–25 किलो सक्रिय तत्व/हे. बुवाई के तुरंत बाद एवं अंकुरण के पूर्व देना चाहिए। इसके साथ साथ 25–30 दिन की अवस्था में निराई–गुड़ाई भी करनी चाहिए।

सिंचाई

सहजन में पहली सिंचाई बुवाई/रोपण के तुरंत बाद करनी चाहिए। दूसरी सिंचाई बुवाई के एक सप्ताह बाद तथा उसके बाद की सिंचाइयाँ प्रत्येक 15–20 दिन के अंतराल पर मिट्टी के प्रकार और फसल की आवश्यकतानुसार करना चाहिए।

कटाई एवं उपज

बुवाई के 85 से 90 दिन बाद फसल चारे हेतु कटाई के लिए तैयार हो जाती है। अच्छा चारा उत्पादन एवं दोबारा अच्छी वृद्धि के लिए पौधे की भूमि से 30 सेंटीमीटर ऊपर से कटाई करें। 85 से 90 दिन से पहले कटाई करने पर तना पतला एवं कमजोर हो जाता है। पौधे की पुनः वृद्धि में कमी और मृत्यु दर अधिक हो सकती है। आगे की कटाई 60 दिन के अंतराल पर करनी चाहिए जब फसल की बढ़वार 5 से 6 फिट हो। प्रत्येक कटाई के बाद तेजी से पौध वृद्धि हेतु 30 किलोग्राम नत्रजन उर्वरक प्रति हेक्टेयर की दर से डालें और सिंचाई करें। खरपतवार नियंत्रण के लिए कतारों के बीच हल्की निराई गुड़ाई करें। सहजन से लगभग 100 से 120 टन प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष हरे चारे के रूप में पत्तियों की उपज प्राप्त होती है। वर्ष में दो बार फल देने वाले सहजन की प्रजातियों की तुड़ाई सामान्यतया फरवरी–मार्च और सितम्बर–अक्टूबर में होती है। प्रत्येक पौधे से लगभग 200–400 फल (40–50 किलोग्राम) सहजन सालभर में प्राप्त हो जाता हैं। सहजन की तुड़ाई बाजार और मात्रा के अनुसार 1–2 माह तक चलता है। सहजन के फल में रेशा आने से पहले ही तुड़ाई करने से बाजार में माँग बनी रहती हैं और इससे लाभ भी ज्यादा मिलता है।

पशुओं को सहजन की पत्तियां खिलाने की विधि

सहजन के चारे को दो से तीन सेमी. कुट्टी करके पशुओं को खिलाना चाहिये। प्रत्येक पशु को 15 से 20 किग्रा. तक सहजन का हरा चारा खिलाया जा सकता है। इसकी पत्तियों को पशुओं को भूसे के साथ 70 से 30 प्रतिशत के अनुपात में मिलाकर निर्वाह या जीविका आहार के रूप में पशुओं को खिलाया जा सकता है। सहजन की अधिक उपलब्धता होने पर इसकी मात्रा को सूखे चारे के साथ 50:50 के अनुपात तक खिलाया जा सकता हैं।

सहजन का चारे के रूप में उपयोग एवं अन्य लाभ

- सहजन की सबसे बड़ी खासियत है कि यह कम उर्वरा शक्ति वाली भूमि पर भी बिना सिंचाई के कई सालों तक हरा भरा रहता है जो कि वर्षभर चारे का स्रोत बनकर किसान के पशुओं के चारे की समस्या को सुलझा सकता है।
- सहजन को न केवल हरे चारे के रूप में बल्कि इसको अच्छे से सुखा कर हे के रूप में संरक्षित किया जा सकता है जो हरे चारे के अभाव के समय उपयोग में लाया जा सकता है।
- चारे के साथ साथ सहजन का स्थानीय व दूर–दराज के बाजारों में सब्जी के रूप में वर्ष भर बिक्री कर किसान की आय को बढ़ाया जा सकता है।
- इसके अलावा सहजन के औषधीय व औद्योगिक गुणों के चलते किसानों के बीच में एक स्थाई दीर्घकालिक आमदनी हेतु सोच को भी विकसित किया जा सकता है।
- सहजन बिना किसी विशेष देखरेख एवं कम से कम लागत पर आमदनी देने वाली फसल है जो कि किसान की आय में वृद्धिकारक साबित हो सकती है।

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/17

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

सहजन

संकलनकर्ताः

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

काँटा रहित नागफनी

वानस्पतिक नामः *ओपंसिया फाइकस इंडिका*

कुलः कैक्टेसी

कांटारहित नागफनी गैर परंपरागत चारे का स्रोत है जिसे शुष्क और अर्धशुष्क जलवायु में उन क्षेत्रों में जहाँ पानी की अत्यंत कमी होती है और जमीन उबड़–खाबड़ एवं कम उपजाऊ होती है ऐसी दशा में जब अन्य किसी चारा फसल को उगाना सम्भव न हो तब कांटारहित नागफनी को उगाकर गुणवत्तायुक्त हरे चारे के रूप में पशु आहार प्राप्त किया जा सकता है। कांटा रहित नागफनी सूखारोधी मरुस्थलीय प्रजाति का पौधा है जो लम्बे समय तक सूखे की स्थिति में भी वृद्धि कर सकता है। कांटारहित नागफनी में 88–94 प्रतिशत तक पानी होता है जो इसे रसीला और स्वादिष्ट हरा चारा बनाता है। नागफनी के पत्तों में विशेष प्रकार की प्रकाश संश्लेषण क्षमता होती है जो इस पौधे को घास तथा अन्य चारा फसलों की तुलना में अधिक शुष्क पदार्थ को जल मे परिवर्तित करने की क्षमता प्रदान करता है जिससे जल संरक्षण में भी फायदा मिलता है।

पोषकता

कांटा रहित नागफनी की पोषकता एवं गुणवत्ता पौधे की प्रजाति, पत्तों की उम्र, मौसम, मिट्टी के प्रकार और उत्पादन परिस्थितियों पर निर्भर करती है। कांटारहित नागफनी में औसतन 4–8 प्रतिशत प्रोटीन, 36 प्रतिशत एन.डी.एफ., 20 प्रतिशत ए.डी.एफ., 28 प्रतिशत राख के अलावा प्रचुर मात्रा में खनिज तत्व जैसे कैल्सियम, लोहा, ताम्बा, मैंगनीज, जस्ता इत्यादि पाए जाते है।

उत्पादन तकनीकी

जलवायु

नागफनी एक मरुस्थलीय पौधा है। यह शुष्क और अर्धशुष्क सूखे क्षेत्रों के लिए बहुत अनुकूलित फसल है। इसको शुष्क क्षेत्रों में लगाना बहुत ही आसान है क्योंकि इसमें पानी को संग्रहित करने की क्षमता बहुत अधिक होती है। जिसके कारण यदि 80–90 प्रतिशत पानी की कमी हो जाय तो भी पौधा जीवित बना रहता है। नागफनी एक सूखारोधी फसल है इसको जरुरत पड़ने पर ही पानी की 1–2 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है जिससे इसकी बढ़वार तेज हो जाये और पशुओं के लिए चारा जल्दी तैयार किया जा सके।

मृदा एवं उसकी तैयारी

कांटारहित नागफनी को सभी प्रकार की मिट्टियों में उगाया जा सकता है। यह अपेक्षाकृत दोमट एवं बलुई दोमट मिट्टी में अच्छी तरह उग सकता है। नागफनी को परती पड़ी जमीनों एवं उबड़ खाबड़ जमीनों में भी उगाया जा सकता है। कांटारहित नागफनी की खेती जलभराव वाले खेतों में नहीं करनी चाहिए। खेत की तैयारी के लिए सर्वप्रथम एक जुताई मिट्टी पलट हल से करनी चाहिए फिर 1–2 जुताई हैरो से करनी चाहिए जिससे खेत अच्छे से तैयार हो जाये।

प्रजातियाँ

भारत में काँटेरहित नागफनी के तीन अभिवृद्धिक उपलब्ध हैं जिन्हें हरे चारे के लिए उगाया जा सकता है, नंबर 1270, नंबर 1271 और टेक्सास 1308।

रोपण पद्वतियां एवं विधि

कांटारहित नागफनी का रोपण इसके पत्तों (क्लैडोड) के माध्यम से किया जाता है। रोपण का उपयुक्त समय फरवरी–मार्च और बरसात के समय जून–सितम्बर होता है। बरसात के मौसम में रोपण बहुत सावधानी से करना चाहिए क्योंकि बरसात के समय में रोगों का प्रकोप ज्यादा होता है। इस प्रकोप कम करने के लिए कटे हुए नागफनी के पत्तों को 10–12 दिन सूखने के बाद ही रोपण के लिए प्रयोग करना चाहिए। कांटारहित नागफनी को विभिन्न पद्धतियों के तहत बहुवर्षीय सूखारोधी घास (त्रिसंकर घास) के साथ अन्तर्सस्यन, चरागाह में रोपण, उद्यान–चरागाह में रोपण एवं कृषित भूमि की मेड़ों पर लगाया जा सकता है। त्रिसंकर घास के साथ कांटारहित नागफनी को लगाने हेतु लगभग 2 मीटर लाइन से लाइन की दूरी और 1 मीटर पौध से पौध की दूरी पर नागफनी को लगाया जाया है और नागफनी की दो लाइनों के अंतःस्थान में त्रिसंकर घास का रोपण करते है। उद्यान चरागाह में फलदार वृक्षों के अंतःस्थान में नागफनी को 1–1 मीटर की दूरी में रोपित किया जा सकता है। इसी प्रकार कृषित भूमि मेड़ों पर भी कांटारहित नागफनी को 1 मीटर की दूरी में रोपित किया जा सकता है।

जल प्रबन्धन

चारे के लिए नागफनी की खेती वर्षा आधारित की जाती है। हालाँकि, स्थापना के दौरान सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। स्थापना के दौरान पानी की अल्प मात्रा भी नागफनी के विकास में अच्छी भूमिका निभाती है। नागफनी की फसल को जरुरत पड़ने पर जीवन रक्षक सिंचाई करनी चाहिए।

पोषक तत्व प्रबन्धन

कांटारहित नागफनी उत्पादन के लिए खेत की तैयारी करते समय गोबर की खाद (5–10 टन/हे.) को मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। उसके पश्चात ही रोपण करना चाहिए। 80–100 किलोग्राम नत्रजन/हैक्टेयर देने से नागफनी की अच्छी उपज ली जा सकती है।

रोग एवं खरपतवार नियंत्रण

नागफनी में बरसात के समय रोपित फसल में स्थापना के समय कवक से होने वाली सड़न आम बात है। इससे बचने की लिए कटाई के तुरंत बाद क्लैडोड को खेतों में ना लगाए। कटाई के घावों को उपचार के लिए नागफनी के पत्तों को 10–12 दिन तक छाया में रख देना चाहिए तथा रोपण से पहले नागफनी के पत्तों को बाविस्टिन नामक फफूंदनाशक से उपचारित कर लेना चाहिए। नागफनी की अच्छी फसल एवं उत्पादकता लेने के लिए खरपतवार नियंत्रण बहुत आवश्यक है। नागफनी में खरपतवार नियंत्रण के लिए ग्लाइफोसेट आदि का प्रयोग दो कतारों के बीच में सावधानी से करना चाहिए।

कटाई छंटाई

नागफनी बहुत ही मुलायम फसल है इसलिए सीधे चराई नहीं करानी चाहिए। पौधों में एक मीटर बढ़त होने पर पहली कटाई हाथों से करनी चाहिए। रोगी व कटीफटी पत्तियों को हटाते रहना चाहिए। पहले दो वर्षों में नीचे की तरफ झुके हुए क्लैडोड एवं भूमि से सटे हुए क्लैडोड की कटाई करनी चाहिए। क्लैडोड को काटने की लिए साफ–सुथरे उपकरणों का प्रयोग करना चाहिए। 5–6 महीने के अंतराल पर नियमित कटाई करनी चाहिए। कभी भी पूरी पत्तियों को एक साथ न तोड़ें।

उपज

रोपाई के 5–6 महीनों के बाद पहली कटाई करना चाहिए। रोपाई के 3 वर्ष बाद पशुओं को चारे के रूप में 40–60 टन/हेक्टेयर/वर्ष क्लैडोड की उपज प्राप्त की जा सकती है।

काँटा रहित नागफनी पशुओं को खिलाने हेतु ध्यान देने योग्य बातें

1. पशुओं को खिलाने के लिए न्यूनतम 5–6 महीनें पुराने एवं 1 इंच मोटे नागफनी के पत्तों को ही प्रयोग में लाना चाहिए। इस बात का भी जरूर ध्यान रखें कि पूरे पौधे को जड़ सहित ना उखाड़ा जाये। खिलाने के लिए एक बार में पौधे की कुल एक तिहाई क्लैडोड की ही कटाई करें। उसके बाद 6 महीने की अंतराल पर ही कटाई करें।
2. पशु को खिलाने से पहले क्लैडोड को चारा कटाई मशीन की सहायता से छोटे–छोटे टुकड़ों में काटें।
3. कांटारहित नागफनी में चरपराहट होती है अतः इसको अकेले नहीं खिलाना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से पशुधन की पाचन क्रिया खराब हो सकती है। नागफनी के पत्तों को अन्य हरे चारे जैसे संकर बाजरा नेपियर का हरा चारा, बरसीम की 'हे' और खेसारी, गेहूं एवं चने के भूसे के साथ

मिलाके खिलाया जा सकता है। सामान्यतः पशुआहार में कांटारहित नागफनी के चारे का भाग 20–25 प्रतिशत तक ही रखना चाहिए।

प्रकाशक:
डॉ. अमरेश चन्द्रा
निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/13

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

काँटा रहित नागफनी

संकलनकर्ता:
गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

सुबबूल

वानस्पतिक नामः *ल्यूसीना ल्यूकोसिफैला*

कुलः लेग्यूमिनेसी

सुबबूल अर्धशुष्क एवं उपोष्ण जलवायु के लिए एक उपयुक्त दलहनी चारा वृक्ष है। इसे आसानी से उगाकर पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। इससे चारा के अलावा ईंधन व सस्ती इमारती लकड़ी भी प्राप्त की जा सकती है। दलहनी वृक्ष होने के कारण यह वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का भूमि में स्थिरीकरण भी करता है जिससे भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि होती है। यह कृषिवानिकी, प्रक्षेत्र वानिकी तथा सामाजिक वानिकी के लिए एक उपयुक्त वृक्ष है। सुबबूल की उन्नत किस्मों में औसतन 23–29 प्रतिशत प्रोटीन, 40–52 प्रतिशत एन.डी.एफ., 25–30 प्रतिशत ए.डी.एफ. 10–14 प्रतिशत लिग्निन और 2–3 प्रतिशत माइमोसिन होती है।

उन्नत किस्में

सुबबूल की प्रमुख उन्नत किस्मों में के–8, के–28, के–29, के–67, के–72, के–601, के–636, एस–10, एस–14, एस–22 और एस–24 हैं।

बीज एवं बुवाई

एक हेक्टेयर क्षेत्र में सुबबूल लगाने के लिए 1–2 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। सुबबूल के बीज की सतह कड़ी होने से अंकुरण कम तथा देर से होता है। इसके जल्दी और अच्छे अंकुरण के लिए बीज को बुवाई से पहले उबलते पानी में 2–3 मिनट तक डाल कर निकाल लेते हैं। इस क्रिया से बीज का ऊपरी छिलका मुलायम हो जाता है तथा जमाव अच्छा होता है। इसके बाद मार्च–अप्रैल माह में पॉलीथीन की थैलियों में मिट्टी और गोबर की खाद अच्छी तरह मिलाकर भर देते हैं और इन थैलियों में उपचारित बीज की बुवाई 1–1–5 सेन्टीमीटर की गहराई पर कर देते हैं। सुबबूल को लगाने के लिए 2–3 मीटर की दूरी पर 45X45X45 सेन्टीमीटर के गड्ढे खोद लेना चाहिए। वर्षा होने के बाद जुलाई–अगस्त माह में 2–3 माह पुरानी पौध इन गड्ढों में लगा देनी चाहिए।

उर्वरक

पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु 5–10 टन/हे. गोबर की सड़ी हुई खाद को बुवाई से 15 दिन पूर्व खेत में मिलाना चाहिए। सुबबूल में प्रति हेक्टेयर 40–50 किग्रा. नाइट्रोजन, 15–20 किग्रा. फास्फोरस तथा 40 किग्रा. पोटाश का प्रयोग चाहिए।

मिश्रित खेती

कृषिवानिकी में सुबबूल को फसलों के बीच 3–4 मीटर की दूरी पर पंक्तियों में लगाकर ग्रीष्मकाल में पौष्टिक चारा एवं ईंधन प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही इसे अन्य चारा फसलों – जैसे बहुवर्षीय घास (संकर बाजरा नेपियर, गिनी घास) एवं वार्षिक चारा फसलों (मक्का, ज्वार, बाजरा) के साथ उगाकर अतिरिक्त चारा प्राप्त किया जा सकता है।

उपज

प्रति हेक्टेयर लगभग 50–60 कुन्तल पौष्टिक सूखा चारा प्राप्त किया जा सकता है। सुबबूल से वर्ष में 5–6 बार तक कटाई करके प्रति वर्ग मीटर 5–6 किग्रा. सूखा चारा प्राप्त किया जा सकता है। इसकी पत्तियों में उपस्थित माइमोसीन के कुप्रभाव से बचने के लिए इसको 30–40 प्रतिशत भूसे अथवा कडवी में मिलाकर खिलाना चाहिए।

सुबबूल का लीफमील उत्पादन एवं उपयोग

सुबबूल के पौधों से लीफमील (पत्तियों का चूर्ण) बनाया जा सकता है जो पशु आहार के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इसमें 15–20 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाती है। लीफमील के उपयोग के बहुत लाभ है जैसे यह प्रोटीन से भरपूर चारा सम्पूरक है जो कम गुणवत्ता वाले मोटे चारे को गुणकारी बनाता है तथा महंगे खली दाना की बचत करता है। यह हरे चारे की कमी के समय खिलाने के लिए उपयोगी है तथा इसे बहुत दिनों तक भंडारित भी कर सकते हैं। बरसात के दिनों में हरी पत्तियों को काटकर सीधे पशुओं को खिलाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त हरी खाद के रूप में भी इसे प्रयोग कर सकते हैं।

लीफमील बनाने की विधि

ऐसे सुबबूल के पौधे जिनका आधार व्यास 2–5 सेमी. हो उन्हें लीफमील बनाने के लिए काटा जा सकता है। एक अनुमान के आधार पर कटाई योग्य सुबबूल पौधों से प्रति हेक्टर बहुतायत से जैव उपज (हरा चारा एवं लकड़ी) मिल सकता है (सुबबूल पत्तियां 12–1 टन/हे./वर्ष और लकड़ी 47–6 टन/हे./वर्ष)। जो पौधे 40–45 दिन के अंतराल पर पत्तियों के हेतु काटे जाते हैं उनमें पत्तियों का उत्पादन अधिक होता है। सुबबूल लीफमील बनाने के लिए सर्वाधिक उपयोगी समय अक्टूबर–नवम्बर एवं मार्च–अप्रैल होता है क्योंकि इस समय पत्तियों का उत्पादन भी अच्छा होता है तथा इन्हें सुखाकर रखने के लिए मौसम भी अनुकूल होता है। लीफमील बनाने के लिए कटे पौधों को खलिहान में लाया जाता है और उन्हें या तो खडी स्थिति में लगा कर या सुखाने के लिए विशेष रूप से बने सुखाने के ढांचे जो कि जमीन से ऊपर बनता है, पर रखकर छाया में सुखाया जाता है। इसे तब तक सुखाया जाता है जब तक कि पत्तियों में नमी 8–10 प्रतिशत तक नहीं पहुंच जाती। इस अवस्था में पत्तियां हल्का झटका देने/डंडे से पीटने पर अपने आप झड़कर अलग हो जाती है और उन्हें एकत्र कर लिया जाता है। इस तरह से एकत्र पत्तियों में से डंठल आदि को अलग कर उन्हें पालीथीन बैग या बोरे में इस तरह भर लेते हैं कि उनका हरा रंग क्षय न हो।

कैसे खिलायें

पशुओं के कुल चारे का एक तिहाई भाग लीफमील से सम्पूरक हो सकता है जिससे उसको दी जाने वाली दाने की आधी मात्रा बचाई जा सकती है। लीफमील को भूसे या दूसरे चारे के साथ खिलाने के पहले अच्छी तरह मिलाएं। पशु आहार में से पालीथीन पैकिंग या स्टेपल्स, पिनें यदि हों तो सावधानी पूर्वक हटा दें। इस तरह से प्राप्त लीफमील में 15 से 20 प्रतिशत क्रूड प्रोटीन, 9 से 10 प्रतिशत खनिज पदार्थ (राख) तथा 74 से 75 प्रतिशत शुष्क पदार्थ की पाचकता वजन के आधार पर होती है।

प्रकाशक:

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/18

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

सुबबूल

संकलनकर्ता:

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

चरागाह उत्पादन एवं प्रबंधन

पशुधन उत्पादकता बढ़ाने हेतु पर्याप्त मात्रा में गुणवत्ता युक्त चारा की उपलब्धता अत्यंत जरूरी है। चारे की उपलब्धता बढ़ाने के लिए कृषियोग्य भूमि पर चारे की फसलों की खेती करने के अलावा सामुदायिक भूमि, विकृत एवं बंजर पड़ी भूमि पर चरागाह उत्पादन कर पशुधन हेतु भरपूर चारा उत्पादन किया जा सकता है।

चरागाह उत्पादन विधि एवं खेत की तैयारी

कृषि योग्य भूमि में चारा उत्पादन के अंतर्गत क्षेत्रफल को बढ़ाना काफी असहज महसूस हो रहा है अतः बंजर, विकृत और सामुदायिक भूमि इत्यादि पर चरागाह का विकास करके पर्याप्त हरे चारे का उत्पादन किया जा सकता है। चरागाह में मवेशी, जंगली जानवर नुकसान न कर सके एवं चरागाह अच्छे से स्थापित हो सके इस हेतु चयन किये गए क्षेत्र को सुरक्षित करना महत्वपूर्ण है। चरागाह को सुरक्षित करने हेतु कांटेदार चारा वृक्ष व झाड़ियां लगायी जानी चाहिए जो चारा भी प्रदान करे व चरागाह में लगायी गयी घास के सही से पनपने को सुनिश्चित करे। चरागाह क्षेत्र को कांटेदार बाड़, पत्थरों की बाड़ व चारो ओर खाई खोद कर भी सुरक्षित किया जा सकता है। मानसून से पहले भूमि पर उग रही अवांछित झाड़ियों एवं वनस्पतियों को हटा देना चाहिए ताकि क्षेत्र साफ हो सके। वर्षा के जल के संरक्षण एवं मृदा के कटाव को रोकने हेतु चयनित भूमि पर विखरी हुई खाईयां बनायीं जानी चाहिए ताकि चरागाह में उगने वाली घास को नमी एवं पोषण मिल सके। इस तरह चरागाह की पैदावार अच्छी हो पायेगी। भूमि को डिस्क हल से 2–3 बार जोत कर जड़ों एवं पत्थर को निकाल कर उसमें गोबर की खाद (5–10 टन/हे.), फॉस्फोरस (30 किलो/हे.) और नत्रजन (20 किलो/हे.) अच्छे से मिट्टी में मिलाना चाहिए। उसके बाद रोलर से मजबूत बीज शैय्या बनाकर 50 सेमी. की दूरी पर बुवाई हेतु पंक्तियाँ का निर्माण किया जाना चाहिए।

बुवाई के तरीके

घास एवं दलहनी चारे के बीजों की बुवाई दो तरीके छिड़ककर या पंक्ति में करते है। पंक्ति में बुवाई करने से यंत्रों द्वारा निराई–गुड़ाई करने में आसानी होती है। बीज का छिड़काव हाथ द्वारा किया जाता है। जब घास या दलहल के बीज को बोते हैं तो पंक्ति अंतराल 50 सेमी. तक रखते है। छिड़ककर बोये गए बीज को ढकने के लिए पेड़ की टहनी पूरे खेत में फेर देते हैं जिससे बीज के ऊपर थोड़ी मिट्टी चढ़ जाती है। पंक्ति में बुवाई के दौरान बीज की गहराई 1 सेमी. से ज्यादा नहीं रखनी चाहिए।

चारा घास एवं दलहनी चारे की प्रजातियों का चयन

चरागाह के जलवायु एवं भूमि के स्वरुप के हिसाब से देशी, स्वादिष्ट, पौष्टिक, उच्च उत्पादकता वाली चारा एवं दलहनी चारे की प्रजातियों का चयन करना चाहिए। दलहनी चारा को चरागाह में सम्मिलित करना चरागाह की गुणवत्ता एवं चारे के उपलब्धि समय को 3–4 माह से 7–8 माह तक बढ़ाने हेतु अत्यंत जरूरी है। भारत के विभिन्न जैव भूगोलिक क्षेत्रों के लिए उचित चारा घास एवं दलहनी चारे की प्रजातियों का विवरण निम्नलिखित है:

चरागाह की बुवाई

दलहनी चारे एवं घास के बीजों की बुवाई का सही समय वर्षाकालीन जुलाई–अगस्त है तथा बुवाई पहली बारिश के साथ हो जानी चाहिए। घासों का बीज हल्का होने की वजह से 2–4 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तथा दलहनी चारे का बीज 4–6 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बोया जाना चाहिए। घास के बीजों को 0.5–1.0 सेंटीमीटर तथा दलहनी चारे को 2–4 सेंटीमीटर गहरा बोना चाहिए। शुद्ध घास की बुवाई करने हेतु बीज की दूरी 50 सेंटीमीटर (लाइन–लाइन व पौधा–पौधा) रखी जानी चाहिए। जब दलहनी चारे को भी घास के साथ लगाना है तो घास के बीज 100 सेंटीमीटर (लाइन–लाइन) एवं 50 सेंटीमीटर (पौधा–पौधा) दूरी पर लगाने चाहिए ताकि दो घास की लाइन के बीच 50 सेंटीमीटर की दूरी पर दलहनी चारे की एक पंक्ति लगायी जा सके।

बीजों का गुटिकाकरण या टिकड़ी बनाना (पैलेटिंग):

घास का बीज हल्का होने के कारण उनकी टिकड़ी बनाना जरूरी है। 3–4 बीजों को गोबर, टैंक की गाध, मिट्टी, रेत (1:1:3:1 अनुपात) के मिश्रण से बनी 4–5 मिलीमीटर की गुटिका में सूखा कर बोया जाता है ताकि अंकुरण सही से हो पाये।

निराई–गुड़ाई, सिंचाई एवं उर्वरक का प्रयोग:

अनचाहे घास को पनपने से रोकने हेतु चरागाह में निरंतर निराई गुड़ाई की आवश्यकता रहती है। घास एवं दलहनी चारे के अंकुरण के बाद एक या दो बार खरपतवार को निकालना जरूरी है। घास की जड़ों के आस पास पर्याप्त नमी नहीं है तो सिंचाई भी करनी चाहिए। इसके अलावा उर्वरक का प्रयोग चरागाह के उत्तम उत्पादन हेतु अत्यंत आवश्यक है। मानसून के बाद, तीन बराबर (20 किलोग्राम प्रत्येक) विभाजित मात्रा में कुल 60 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर, फॉस्फोरस (30 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर–एकल खुराक) चरागाह में डाली जानी चाहिए। दलहनी चारा फसल मौजूद होने पर फॉस्फोरस की मात्रा दोगुनी डालनी चाहिए।

भारत में विभिन्न क्षेत्रों के लिए उपयुक्त चारा घास एवं दलहनी चारे की प्रजातियाँ

क्र.सं.	क्षेत्र	घास/दलहनी चारा
1.	पश्चिमी शुष्क क्षेत्र (राजस्थान, हरियाणा, पंजाब, कच्छ तथा सौराष्ट्र)	**घासः** सेवन घास, अंजन घास, *पेनिकम एंटीडोटेल* **दलहनी चाराः** *क्लाइटोरिआ टरनेशिया, स्टायलोसेन्थस हमाटा, स्टायलोसेन्थस सेबराना, स्टायलोसेन्थस स्केब्रा, एटाइलोशिया स्कैरेबेआइडेस*
2.	मध्य पूर्वी, पंजाब, पूर्वी राजस्थान, द. पूर्वी हरियाणा, पश्चिमी उ.प्र., उत्तरी गुजरात, उत्तरी. पश्चिमी म.प्र., आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु और कर्नाटक का पठार	**घासः** धवलू घास, सौन घास, अंजन घास, धामन घास, दूब घास, लम्पा घास, बड़ा फुंलवा **दलहनी चाराः** *क्लाइटोरिआ टरनेशिया, स्टायलोसेन्थस हमाटा, स्टायलोसेन्थस सेबराना, स्टायलोसेन्थस स्केब्रा*
3.	जल मग्न क्षेत्र (उ.प्र., म.प्र., बिहार, असम, पं. बंगाल, गुजरात, केरल एवं तमिलनाडु)	**घासः** सिग्नल घास, गिनी घास, मच्छौरी घास, बहिया घास **दलहनी चाराः** *सेस्बेनिआ मिक्रोकार्पा*
4.	मैदानी क्षेत्र (पं. बंगाल, उड़ीसा, म.प्र., महाराष्ट्र)	**घासः** गिनी घास, नंदी घास, पंगोला घास, मच्छौरी घास, बड़ा फुलवा घास, डिजिटैरिया डिकम्बेन्स **दलहनी चाराः** *क्लाइटोरिआ टरनेशिया, स्टायलोसेन्थस हमाटा*
5.	उत्खाड़/बीहड़ क्षेत्र (उ.प्र., म.प्र., राजस्थान, गुजरात)	**घासः** पेनीसेटम पेडिसिलेटम, अंजन घास, लम्पा घास, दूब घास, सेवन घास **दलहनी चाराः** *क्लाइटोरिआ टरनेशिया, स्टायलोसेन्थस हमाटा, स्टायलोसेन्थस सेबराना, ,टाइलोषिया स्कैरेबेआइडेस*
6.	ऊसर तथा क्षारीय भूमि क्षेत्र (पंजाब, हरियाणा, उ.प्र., गुजरात)	**घासः** रोडस घास, बहिया घास, स्पोरोबोलस मार्जिनेटस **दलहनी चाराः** *हेज लूसर्न, आरटीप्लेक्स प्रजातियाँ, अरेयकिस ग्लाबराटा, लिस्पेडिजा कु,नता*
7.	समुद्रतटीय क्षेत्र (तमिलनाडु, उडीसा, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गोवा, केरल)	**घासः** पेस्पेलम डिस्टीकम, पेस्पेलम वेजिनेटम, सिग्नल घास, ब्रेकेरिया म्यूटिका **दलहनी चाराः** *क्लाइटोरिआ टरनेशिया, स्टायलोसेन्थस हमाटा, स्टायलोसेन्थस सेबराना, मेडिकागो सेटाइवा*
8.	निम्न पहाड़ी क्षेत्र (उ.प्र., पंजाब, हिमाचल प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर, असम)	**घासः** धबलू घास, थिन नेपियर घास, उपलूदा मुटिका, सेतरिआ अनसेप्स, रोडेज घास **दलहनी चाराः** *मैक्रोटाईलोमा एक्सईलर, वाइट क्लोवर, स्टायलोसेन्थस हमाटा, मेडिकागो ।तिवा*
9.	उच्च पहाड़ी क्षेत्र (जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तरांचल, पंजाब, उत्तरी पूर्व राज्य)	**घासः** लोलियम सप्रेटेन्स, लोलियम मल्टीफलोरम, पोआ प्रेटेंसिस, फ्लूयम प्रेटेन्स, ब्रोमस इनर्मिस, डेक्टाइलिस ग्लोमेरेटा, फेस्टुआ प्रेटेंसिस **दलहनी चाराः** *वाइट क्लोवर, रेड क्लोवर, स्टायलोसेन्थस हमाटा, मैक्रोटाईलोमा एक्सईलर, नेओनोटोनिआ विघटी, मेडिकागो सेटाइवा*

चरागाह की कटाई एवं चराई प्रबंधन:

स्थापना के प्रथम वर्ष में चरागाह में घास की कटाई कट–एंड कैरी (काट कर ढ़ोना) प्रणाली के अंतर्गत की जाती है। बारिश खत्म होने के बाद और घासों के सुषुप्तावस्था में जाने से पहले कटाई करनी चाहिए। घास की अधिकता में उसे "हे" सूखी घास के रूप में संरक्षित करना चाहिए। स्थापना के प्रथम वर्ष में केवल एक ही कटाई सितम्बर–अक्टूबर माह में लेनी चाहिए। तत्पश्चात घास के विकास के अनुसार कटाई चक्र को

निश्चित करना चाहिए। चराई प्रबंधन तब किया जाता है जब चरागाह केवल चराई के लिए उपयोग किया जाता है और घास की कटाई नहीं की जाती है। चराई हेतु पशु के प्रकार एवं संख्या को चरागाह उत्पादन के हिसाब से निश्चित किया जाता है ताकि चरागाह का उत्पादन बना रहे। जिस समय घास व दलहनी चारा बीज बना रहे हो उस समय चराई नहीं करनी चाहिए अन्यथा घास व दलहनी चारे की संख्या एवं उत्पादन में गिरावट हो जाएगी। "घूर्णन चराई" का पालन करना चाहिए और चरागाह की क्षमता से अधिक पशुधन की चराई नहीं करनी चाहिए। घूर्णन चराई में चरागाह को एक समान चार क्षेत्रों में विभाजित कर पशुधन को किसी एक भाग में 25–30 दिनों तक चराई करा दूसरे भाग चराई हेतु स्थानांतरित किया जाता है। इससे घास की पुनः वृद्धि हो बीज बन कर चारो ओर फैल जाते है जिस से उनका स्वःप्रजनन, संख्या एवं उत्पादकता कायम रहती है।

चारे का संरक्षण:

अधिक चारे को सही से सुखाकर, सूखी जगह पर भण्डारण करना चाहिए या साइलेज बनाना चाहिए। संरक्षित चारे को चारे की कमी के समय में उपयोग किया जा सकता है।

चरागाह का पुनः बीजारोपण:

दलहनी चारे का प्रत्येक 4–5 साल के बाद, घास का प्रत्येक 7–8 वर्षों के बाद पुनः बीजारोपण करना अत्यंत जरूरी है क्यूंकि उनकी संख्या एवं उत्पादन में कमी आने लगती है। इस तरह से चरागाह उत्पादन को फिर से कायम किया जा सकता है।

चारा वृक्षों का चरागाह पर समन्वय:

जाड़े के मौसम में जब घास से चारा उपलब्ध नहीं होता है उस समय चारा वृक्ष की पत्तियों से हरा चारा प्राप्त कर पशुधन के चारे की जरूरत को पूरा किया जा सकता है। वृक्ष की पत्तियाँ पौष्टिक, सुपाच्य और पोषक तत्वों से परिपूर्ण होने की वजह से दुग्ध उत्पादन में वृद्धि करती हैं। अतः मोरिंगा, सुबबूल, सेसबेनिया, अरडू इत्यादि जैसे वृक्ष जो तेजी से पनपते है उन्हें चरागाह की मेड़ पर आसानी से उगा कर चारा की कमी के समय उपयोग किया जा सकता है। चारा उत्पादन की दृष्टि से उपयोगी वृक्ष इस प्रकार है।

चारे वाले वृक्ष

क्र.सं.	वानस्पतिक नाम	हिन्दी/अंग्रेजी/सामान्य नाम
1.	*अकेसिया कटेचू*	खेर
2.	*अकेसिया नीलोटिका*	बबूल
3.	*अकेसिया टारकोलिस*	इसराइली बबूल
4.	*अल्बीजिया अमारा*	काला सिरिस
5.	*अल्बीजिया लेबेक*	सिरिस
6.	*अल्बीजिया प्रोसेरा*	सफेद सिरिस
7.	*एनोगेसिस पेन्डुला*	एनोगेसिस
8.	*एनोगेसिस लेटिफोलिया*	वांकली
9.	*आरटोकारपस इन्टीग्रीफोलिया*	आरटोकारपस
10.	*एडीना कार्डिफोलिया*	हल्दू
11.	*एजैडिरेक्टा इन्डीका*	नीम
12.	*बैसिआ लैटीफोलिया*	महुआ
13.	*ब्रीडेलिया रैटूसा*	ब्रीडेलिया
14.	*बहुनीया मालावेरिका*	कचनार
15.	*बहुनीया परपुरिया*	कचनार
16.	*कैपेरिस स्याइनोसा*	कैपरिस
17.	*कैसिया फिस्टुला*	अमलतास
18.	*कारडिया डाइकोटोमा*	लसोरा
19.	*कासटीनिया सटाइवा*	कैसटोनिया
20.	*डलवरजिया सीसू*	षीषम
21.	*डलवरजिया लैटिफोलिया*	लैटीफोलिया
22.	*डाइकोटेकिस नूटेन्स*	नूतन
23.	*इरीथ्राइना इन्डिका*	इरीथ्राइना
24.	*फोस ॉलिवेटिका*	फोस
25.	*फाइकस लेकोरा*	पाकर
26.	*फाइकस बेंगालेंसिस*	बरगद
27.	*फाइकस ग्लारोमेटा*	गूलर
28.	*फाइकस रिलिजिओसा*	पीपल
29.	*ग्लीरीसीडा मैकुलेटा*	ग्लीरीसीडा
30.	*ग्रीविया अफोजीटीफोलिया*	ग्रीविया, भीमल
31.	*गूलीना अरवोरी*	गूलिना
32.	*हार्डवीकिया वायनेटा*	अंजन
33.	*हेलेक्टोरा आइसोरा*	मरोरफली
34.	*कीडिया कैलीसीना*	पूला
35.	*ल्युसिना ल्यूकोसीफेला*	सूबबूल
36.	*मीलेसिया आरीकुलेटा*	मीलेसिया
37.	*मोरिन्गा प्ट्रीगोसपेरमा*	सहजन
38.	*मोरस अल्वा*	सहतूत
39.	*पीथेकोलावियम डलसी*	पीथाकोलोवियम
40.	*प्रोसोपीस सिनेरेरिया*	खेजरी
41.	*प्रोसोपीस जुलीलोरा*	विलायती बबूल
42.	*क्वेरक्स इनकेरा*	क्वेरक्स वान्य
43.	*क्वेजोनिया डालवरजियाव्याडिस*	क्वेजोनिया
44.	*रोवीनिया स्यूडोकेसिया*	रोविनिया
45.	*ससबेनिया ग्रेन्डिलोरा*	अगस्ती
46.	*सैलिक्स टेट्रासपरमा*	सेलिक्स
47.	*टमेरिक्स अरटिकुलेटा*	टनमेरिक्स
48.	*टरमीनेलिया टोमेन्टोसा*	सेन

प्रकाशकः
डॉ. अमरेश चन्द्रा
निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)
0510-2730666
0510-2730833
director.igfri@icar.gov.in
https://igfri.icar.gov.in
@ icarigfri Jhansi
igfri.jhansi.56
IGFRI Youtube Channel
Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/06

भाकृअनुप ICAR | भा.च.चा.अ.सं. IGFRI

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

चरागाह उत्पादन एवं प्रबंधन

संकलनकर्ता:
गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पांडे,
सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील,
बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय,
बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल,
महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी,
अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी,
प्रतीक श्रीवास्तव, रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी–284003 (उ.प्र.)

वन चरागाह पद्धति

वन–चरागाह पद्धति वर्षा आश्रित क्षेत्र से वर्ष पर्यन्त हरा चारा उपलब्ध कराने के लिए एक स्थायी और सस्ता तरीका है। मूलतः वन चरागाह वानिकी की ही एक पद्धति है जिसमे बहुउद्देशीय पेडों को अनुपयुक्त बंजर भूमि या पशु चराई वाले क्षेत्र में कतारों में लगाते है और कतारों के बीच की खाली जमीन में उन्नत किस्म की घास व दलहन की बुवाई कर उन्नत चरागाह का विकास करते हैं। इस प्रकार से वन चरागाह पद्धति द्वारा बंजर और बेकार पड़ी हुई भूमि का उपयोग हो जाता है और पशुओं हेतु वर्ष पर्यन्त हरा चारा प्रदान करता है और साथ ही साथ पेड़ों से लकड़ी भी प्राप्त होती है जो किसानों को अतिरिक्त आय प्रदान कर सकती है। इसके अलावा वन–चरागाह का पर्यावरण और कृषि पारिस्थितिकी संतुलन में भी काफी महत्पूर्ण योगदान है। वन–चरागाह मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाकर उसको उपजाऊ बनाते हैं साथ ही मृदा कटाव को रोकते हैं और मृदा में जल धारण एवं संरक्षण को भी बढ़ाते हैं। इस प्रकार से सालों से बंजर पड़ी भूमि वन–चरागाह स्थापित करने से उपजाऊ हो जाती है। वन–चरागाह से चारा उत्पादन भी ज्यादा प्राप्त होता है जो सामान्य चरागाह की तुलना में सात गुना तक हो सकता है।

क्रम संख्या	वन–चरागाह मॉडल	सूखा चारा उत्पादन (टन/हे.)	माहवार चारा उपलब्धता
1.	देशी बबूल (वृक्ष) + धवलू/गिनी/अंजन (घास) + स्टायलो (दलहनी चारा)	5–10	घास और दलहनी चारा से जुलाई से दिसंबर तथा पेड़ों से नवंबर–दिसंबर तक
2.	शहतूत (वृक्ष) + धवलू/अंजन/गिनी (घास) + स्टायलो/अपराजिता (दलहनी चारा)	5–10	घास और दलहनी चारा से जुलाई से दिसंबर तथा पेड़ों से मार्च से जून और सितम्बर से नवंबर तक
3.	अंजन (वृक्ष) + धवलू/अंजन/गिनी+ स्टाइलो	5–10	घास और दलहनी चारा से जुलाई से दिसंबर तथा पेड़ों से मार्च से जून तक
4.	पाकर (वृक्ष)) + धवलू/गिनी/अंजन (घास) + स्टायलो/अपराजिता (दलहनी चारा)	5–10	घास और दलहनी चारा से जुलाई से दिसंबर तथा पेड़ों से मार्च से जून तक

विभिन्न परिस्थितिओं हेतु संस्तुत वन–चरागाह मॉडलः

वन–चरागाह का विकास मुख्य रूप से शुष्क और अर्ध शुष्क जलवायु के उन क्षेत्रों में किया जाता है जहाँ वर्षा 400–700 मिलीमीटर तक होती है और मिट्टी कम उपजाऊ होने के कारण सघन फसल और चारा उत्पादन के काम में नहीं लाई जा सकती। ऐसी परिस्थितियों के लिए संस्तुत वन–चरागाह मॉडल निम्न हैंः

वन–चरागाह की स्थापना

वन–चरागाह की स्थापना बंजर, विकृत भूमि, सामुदायिक भूमि इत्यादि पर किया जा सकता है। वन–चरागाह में मवेशी, जंगली जानवर नुकसान न कर सके एवं चरागाह अच्छे से स्थापित हो सके इस हेतु चयन किये गए क्षेत्र को सुरक्षित करना महत्वपूर्ण है। चरागाह को सुरक्षित करने हेतु कांटेदार चारा वृक्ष व झाड़ियां लगायी जानी चाहिए जो चारा भी प्रदान करे व चरागाह में लगायी गयी घास और दलहनी चारे के सही से पनपने को सुनिश्चित करे। चरागाह क्षेत्र को कांटेदार बाड़, पत्थरों की बाड़ व चारो ओर खाई खोद कर भी सुरक्षित किया जा सकता है। मानसून से पहले भूमि पर उग रही अवांछित झाड़ियों एवं वनस्पतियों को हटा देना चाहिए ताकि क्षेत्र साफ हो सके।

पेड़ एवं घास का रोपण

वन–चरागाह की स्थापना हेतु वर्षा शुरु होने से पहले पेड़ों को लगाने हेतु 45×45×45 सेमी. के गड्ढे लगभग 4×4 मीटर के अंतराल पर बनाने चाहिए। पेड़ों की दो लाइनों के बीच अंतःस्थान में घास की बुवाई 50–70 सेमी. लाइन से लाइन की दूरी और 30–45 सेमी. पौध से पौध की दूरी पर करें एवं घास की दो लाइनों के बीच दलहनी चारे की बुवाई करनी चाहिए। इस प्रकार से घास एवं दलहनी चारे का 3–4 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

वन–चरागाह में पोषक तत्व प्रबंधन हेतु प्रति पेड़ 10 किलोग्राम गोबर की खाद एवं 50:50:50 ग्राम नाइट्रोजनः फॉस्फोरसः पोटाश का प्रयोग करना चाहिए। घास में पोषक तत्त्व प्रबंधन हेतु 40:30:30 किलोग्राम नाइट्रोजनः फॉस्फोरसः पोटाश का प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन का प्रयोग दो बराबर भागों में करना चाहिए।

जल प्रबंधन

हालाँकि वन–चरागाह वर्षाधारित होते हैं फिर भी पेड़ों और घास के रोपण के दौरान अगर हल्कीसिंचाई उपलब्ध हो तो कर देनी चाहिए जिससे की बीजों का पेड़ों की पौध का जमाव और घास का अंकुरण संतोषजनक हो जाये।

उत्पादन एवं लागत

वन चरागाह पद्धति की स्थापना में लगभग रू. 40000–50000 का खर्च आता है और इस पद्धति से 5–10 टन/हे. शुष्क पदार्थ का उत्पादन किया जा सकता है जोकि 2–4 वयस्क पशुओं को वर्ष पर्यन्त चारा उपलब्ध करा सकता है तथा अच्छी देखरेख करने पर 20–25 वर्ष तक चलता है जो बाद में विकृत एवं बंजर भूमि को उपजाऊ कर देता है साथ ही पर्यावरण सुधार भी करता है।

प्रकाशकः
डॉ. अमरेश चन्द्रा
निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)
0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/21

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

वन चरागाह पद्धति

संकलनकर्ता:
गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)

उद्यान–चारा पद्धति

उद्यान- चारा पद्धति एक ही क्षेत्र में उपयुक्त फल वृक्षों के साथ–साथ चारा प्रदान करने वाली घास एवं दलहनी किस्मों की मिश्रित खेती है। उद्यान–चारा पद्धति फलोत्पादन के साथ–साथ पशुधन हेतु हरे एवं सूखे चारे की उपलब्धता बढ़ाने में एवं मानव के सुपोषण हेतु प्रतिदिन फल उपलब्धता बढ़ाने में सार्थक सिद्ध हो सकती है।

उद्यान चारा पद्धति लगाने के क्रम

1. **पशु चराई से बचाव :** जिस क्षेत्र में उद्यान–चारा पद्धति का विकास करना हो पहले उसे पशु चराई से बचाव हेतु घेराव सुनिश्चित कर लें।
2. **मृदा एवं नमी संरक्षण :** वर्षा आश्रित खेती के लिए पानी का बहुत महत्व है। पूरे खेत का पानी खेत में ही रोकने का प्रयास करें। इसके लिए बंधियां बनायें, खेत में कन्टूर नालियां क्रमशः या बिखरे हुए बनायें।
3. **उपयुक्त फल किस्मों एवं प्रजातियों का चयन :** बंजर भूमि के अनुरूप फल जैसे आंवला, बेर, शरीफा, अमरूद, नीबू वर्गीय फल जैसे मौसम्मी, कागजी नीम्बू, इमली, बेल इत्यादि की उन्नत किस्मों का चयन करें।
4. **उपयुक्त चारा फसलों का चयनः** उपयुक्त मृदा जलवायु के अनुरूप चारा फसलों का चयन करें। विभिन्न वर्षा क्षेत्र के उपयुक्त घास एवं दलहनी चारा निम्नलिखित हैं:

उद्यान चारा पद्धति प्रारूप स्थापना :

यह पद्धति वर्षा आश्रित क्षेत्रों के लिए एक उपयुक्त टिकाऊ उत्पादन देने वाली है, अतः भूमि एवं नमी के संरक्षण तथा पौध रोपण एवं चारा फसल लगाने हेतु कर्षण क्रियायें एवं भूमि की तैयारी वर्षा आरम्भ होन के पूर्व कर लेनी चाहिए। फल रोपण हेतु उपरोक्त सारणी के अनुसार 6–8 x 6–8 मीटर की दूरी पर फल प्रजाति के अनुसार 1 x 1 x 1 मीटर आकार के गडढे ग्रीष्म ऋतु तक खोदकर छोड़ देना चाहिए। वर्षा आरम्भ होने के पूर्व मिट्टी तथा सड़ी गोबर की खाद (60:40 अनुपात में), थोड़ी मात्रा में नाइट्रोजन (50 ग्राम) फास्फोरस (20 ग्राम), पोटाश (20 ग्राम) तथा कुछ दीमकनाशी दवा मिलाकर गडढों को भर देना चाहिए।

पौधा रोपण :

मृदा एवं जलवायु के उपयुक्त अच्छी किस्म के कलमी पौधे सरकारी/पंजीकृत/विश्वसनीय पौधशाला से प्राप्त कर वर्षाकाल के दौरान गड्ढों में रोपण करना चाहिए।

नवीन उद्यान रोपण हेतु कुछ महत्वपूर्ण बातें

- फल का चुनाव स्थानीय उपयुक्तता एवं बाजार की माँग के अनुसार करें।
- प्रजातियां चयन में प्रसंस्करण किस्मों को समुचित स्थान दें।
- फल प्रजाति, आवश्यकता, भूमि प्रकार, उत्पादकता, पेड़ फैलाव को ध्यान में रखकर रोपण की दूरी निर्धारित कर ले आउट करें तथा 1x1x1 मीटर का गड्ढा वांछित दूरी पर मई एवं जून में बनावें।
- गड्ढे की भराई 1/2 भाग उपजाऊ मिट्टी, 1/2 भाग सड़ी गोबर/कम्पोस्ट की खाद एवं कीटनाशक मिलाकर करें। भराई भूमि की सतह से 4–5 सेमी. ऊंची करें।
- उद्यान रोपण का अच्छा समय 15 जुलाई से 15 सितम्बर है।
- पौध लगाने से पूर्व पिण्डी से पैकिंग सामग्री हटा दें।
- गड्ढे में पौधों को उतनी ही गहराई में रोपें जितनी पौधशाला में थे।
- पौध लगाने के बाद मिट्टी को इस प्रकार दबायें कि पिण्डी न टूटे।
- पौध रोपण के तुरन्त बाद सिंचाई अवश्य करें। बाद में आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें।
- अधिक वर्षा के समय पेड़ के पास पानी न भरने दें।
- बाग में घेर–बाड़ व वायु अवरोधक पौधों को अवश्य रोपित करें।

उद्यान–चारा पद्धति हेतु विभिन्न वर्षा क्षेत्रों के उपयुक्त फल वृक्ष एवं किस्में

वर्षा क्षेत्र (मिमी.)	फल वृक्ष का नाम	उपयुक्त किस्में	रोपड़ दूरी (मीटर)	प्रति हेक्टेयर पौधों की आवश्यकता संख्या
300–500	बेर (*जिजीफस मोरिसियाना*)	कत्था, बेगवाड़ी, मुण्डिया, गोला,सेब, बनारसी कड़ाका, उमरान	8x8	156
	आंवला (*इम्बलिका ऑफीसिनैलिस*)	चकैया, हाथीझूल, फ्रासिस, एन.ए.–7, कृष्णा, कंचन	8x8	156
	जामुन (*सिजीजियम कुमुनी*)	स्थानीय चयन कण्ठ जामुन, फरेंदा	8x8	156
	महुआ (*मधुका लेटिफोलिया*)	स्थानीय चयन	8x8	156
500–700	बेल (*ऐगेल मार्मिलास*)	गोण्डा, कागजी, मिर्जापुर, हरावां सेलेक्सन, एनवी–5, एनवी–9	8x8	156
	शरीफा (*एन्नोना स्कवामोसा*)	वालानगर, मैमुथ, वाशिगंटन, अर्कासहन	6x6	277
	कागजी नीम्बू (*सीट्रस ओफिसिनेलिस*)	बारामासी लेमन, पंत लेमन, कागजी लाइम,	6x6	277
	आंवला (*इम्बलिका ऑफीसिनैलिस*)	एन.ए.–7, एन.ए.–6, कृष्णा, कंचन	6x6	277
700 से अधिक	आम (*मैंगीफेरा इण्डिका*)	अगेती–गौरजीत, बाम्बेग्रीन मध्य मौसम – दशहरी, लंगड़ा, देर से – चौसा, सफेदा मल्लिका, आम्रपाली	10x10 (आम्रपाली 4x4)	100 625
	अनार (*पुनिका ग्रेनेटम*)	जालोर सिडलेस, जोधपुर रोड, गणेष, कन्धारी ढोलका	4x4	625
	आंवला (*इम्बलिका ऑफीसिनैलिस*)	एन.ए.7, कृष्णा, कंचन	6x6	277
	अमरूद	इलाहाबादी सफेदा, लखनऊ–49, एप्पल कलर, चित्तीदार, ललित, ांगम	6x6	277

फल वृक्षों के अतःस्थान में बहुवर्षीय घास एवं दलहनी चारा फसलों की खेती

फल वृक्षों के बीच पड़े अतः स्थान में उपयुक्त बहुवर्षीय घास एवं दलहनी चारा फसलों की खेती कर अतिरिक्त पशु पोषण हेतु हरा चारा प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए निम्न क्रम में बहुवर्षीय चारों की स्थापना इस प्रकार करते हैं। घास की बुवाई के लिए तैयार भूमि में 4–6 किग्रा./हे. बीज की दर से घास एवं 6–8 किग्रा./हे. बीज की दर से दलहनी चारा की बुवाई करते हैं।

घासों का रोपणः

घासों की रोपाई हेतु मई माह में घासों की पौधशाला तैयार कर लेनी चाहिए। दो से ढाई माह पुरानी पौध रोपाई के लिए उपयुक्त होती है। विकल्प स्वरूप, मौजूद घास की पौध उपलब्ध हो तो उन्हें चिन्हित कर लेना चाहिए। इन्हीं घासों के जड़युक्त गुच्छा (रूटेड स्लिप) भी रोपण के लिय प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

दलहनी चारे की बुवाईः

कैरेबियन स्टाइलो बीज (गर्मपानी से उपचारित) को 2–3 किग्रा. प्रति हे. की दर से कुछ वर्षा होने के बाद घास की पंक्तियों के बीच छिड़कवा/पंक्ति विधि से 1–2 सेमी. की गहराई पर बोनी चाहिए।

सिंचाई एवं देख रेख :

रोपित फल वृक्षों को वर्षा आरम्भ होने तक या दो वर्षा तक आवश्यकता पड़ने पर जीवन यापन हेतु सिंचाई करते रहना चाहिए। दो वर्ष तक रोपित पौध की अच्छी देख रेख करनी चाहिए। रोग एवं कीट का प्रकोप होने पर दवा का छिड़काव करना चाहिए। खरपतवार एवं वाष्पोत्सर्जन कम करने के लिए बीच में थालों की गुड़ाई करते रहना चाहिए।

पोषण आपूर्तिः

इस पद्धति की संस्तुति वर्षा आश्रित अर्धशुष्क भूमि के लिए है, जहाँ पोषण का बहुत महत्व है। पौधों को पोषक तत्व (नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश) को रासायनिक एवं कार्बनिक पदार्थ के माध्यम से देना चाहिए। पोषण तत्व की वास्तविक आवश्यकता मृदा परीक्षण के बाद निश्चित की जा सकती है। यद्यपि औसत पोषक तत्व की मात्रा इस प्रकार हैः

आठ वर्ष बाद फल के पोषक तत्व की मात्रा स्थिर कर लेते हैं। साथ में लगे चारा फसलों को 20–30 किग्रा. नाइट्रोजन, 20 किग्रा. फास्फोरस एवं 20 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टर अलग से देते हैं।

उद्यान–चरागाह पद्धति के लाभ :

उद्यान–चरागाह पद्धति अर्थात एक ही भूमि पर एक समय में फलदार वृक्षों और बहुवर्षीय चारा फसलों को एक साथ उगाया जाना।

वर्षा क्षेत्र (मि.मी.)	घास दलहन	मृदा किस्म	उपज चारा (शुष्क भार ट./ हे.)
300 – 500	ब्लूपेनिक (*पेनिकम एन्टीडोटैल*)	दोमट–बलुई दोमट	3.0
	कैल (*डाइकैंथियम एन्यूलेटम*)	दोमट–बलुई दोमट	2.5
	बहीया (*पास्पेलम नोटेटम*)	क्लेदोमट	3.0
	केरेबियन स्टाइलो	हल्की मृदा	3.5
500 – 700	रोड्स घास (*क्लोरिस गायना*)	क्षारीय दोमट	2.5
	कैरेबियन स्टाइलो	बलुई दोमट– दोमट	3.5
	सीराट्रो	बलुई दोमट– दोमट	1.8
700 से अधिक	नैपियर (*पेनीसिटम परपुरियम*)	बलुई दोमट	4.0
	केल (*डाईकैन्थियम एनुलेटम*)	दोमट– बलुई दोमट	2.5

उद्यान चारा पद्धति में पोषक तत्वों की आवश्यकता

पौध की उम्र (वर्षों में)	पोषक तत्व			
	सड़ी गोबर की खाद (किग्रा./पौध)	नाइट्रोजन (ग्रा./ पौध)	फास्फोरस (ग्रा./ पौध)	पोटाश (ग्रा./ पौध)
1	20	100	25	50
2	30	200	50	100
3	40	300	75	150
4	50	400	100	200
5	50	500	125	250
6	50	600	150	300
7	50	700	175	350
8	50	800	200	400

फलदार वृक्ष विटामिन एवं खनिज लवणयुक्त फल प्रदान करते हैं तो दूसरी तरफ मृदा के कटाव को रोकने के लिए इनकी गहरी जड़े सहायक होती है साथ ही साथ पौष्टिक अंतः फसलों से पशुओं के लिए चारे की आपूर्ति भी हो जाती है।

संस्तुत उद्यान-चरागाह पद्धतियाँ

1. **उष्ण कटिबंधीय जलवायु**

   सपोटा + गिनी/सेनेगल घास + स्टायलो : चारा उत्पादन : 7–9 टन शुष्क पदार्थ/हे.

2. **उपोष्ण कटिबंधीय जलवायु**

- आंवला + अंजन घासः शुष्क–अर्धशुष्क क्षेत्र (500–800 मिमी. वर्षा), फलोत्पादनः 7–10 टन/हे., चारा उत्पादनः 7–9 टन शुष्क पदार्थ/हे.

- अमरुद–अंजन घासः अर्धशुष्क क्षेत्र (700–800 मिमी. वर्षा), फलोत्पादनः 6–8 टन/हे. चारा उत्पादनः 7–9 टन शुष्क पदार्थ/हे.

- सेब + रेड क्लोवर/व्हाइट क्लोवर/ऑर्चर्ड घासः फलोत्पादनः 25–30 टन/हे., चारा उत्पादनः 14–18 टन शुष्क पदार्थ/हे.

- बादाम + आर्चर्ड घास/टाल फेस्क्यू/फेलेरिस घासः फलोत्पादनः 0.8–0.9 टन/हे., चारा उत्पादनः 20–25 टन शुष्क पदार्थ/हे.

प्रकाशकः

डॉ. अमरेश चन्द्रा

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

ग्वालियर रोड, निकट पहूज बाँध, झाँसी–284003 (उत्तर प्रदेश)

0510-2730666 | @ icarigfri Jhansi
0510-2730833 | igfri.jhansi.56
director.igfri@icar.gov.in | IGFRI Youtube Channel
https://igfri.icar.gov.in | Kisan Call Centre 0510-2730241

मुद्रक : क्लासिक इण्टरप्राइजेज, झाँसी. 7007122381, 9415113108

आई.जी.एफ.आर.आई./एस.सी.एस.पी./2023/फोल्डर/22

अनुसूचित जाति उप परियोजनांतर्गत

उद्यान-चारा पद्धति

संकलनकर्ताः

गौरेन्द्र गुप्ता, पुरूषोत्तम शर्मा, साधना पाण्डेय, सुनील कुमार, अमित कुमार पाटील, बिश्व भास्कर चौधरी, दीपक उपाध्याय, बृजेश कुमार मेहता, राजेश कुमार सिंघल, महेश एच.एस., मनजंगौड़ा एस.एस., मुकेश चौधरी, अविनाश चंद्र, सचेन्द्र त्रिपाठी, प्रतीक श्रीवास्तव एवं रोहित वर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय चरागाह एवं चारा अनुसंधान संस्थान

(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)

ग्वालियर रोड, झाँसी-284003 (उ.प्र.)